अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का संदेशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) ■ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ■ एक प्रति २ आना

वर्ष-३, अंक-२४ ■ राजघाट, काशी ■ शुक्रवार, १५ मार्च, '५७

गलत राह !

संसार में शान्ति-स्थापना के लिए तथा युद्ध-निवारण के लिए मानवीय व्यक्ति में ही क्रान्ति होनी चाहिए, आपमें और मुझमें क्रान्ति होनी चाहिए। हृदय-परिवर्तन के बिना आर्थिक क्रान्ति में कोई सार नहीं, क्योंकि भूख जिस आर्थिक अव्यवस्था का परिणाम है, उसका मूल कारण लोभ, ईर्ष्या, दुर्भाव, परिग्रह-वृत्ति इत्यादि हमारे दुष्ट मनोभाव ही हैं। दुःख, भूख और युद्ध का अन्त करने के लिए मनोवैज्ञानिक क्रान्ति अनिवार्य है और हममें से बहुत थोड़े उसके लिए तैयार हैं। हम शान्ति के विषय में चर्चा करेंगे, नये-नये विधि-विधान बनाने की योजनाएँ करेंगे, राष्ट्रसंघ जैसे नये-नये संघ बनाते जायेंगे, यह करेंगे और वह करेंगे! फिर भी हम शान्ति को नहीं पा सकेंगे; क्योंकि हम अपनी प्रतिष्ठा, अपना अधिकार, अपना धन, अपनी संपत्ति और अपने निर्बुद्ध जीवन का त्याग नहीं करते!

—जे० कृष्णमूर्ति

भारतीय राजचिह्न का संकेतार्थ !

(विनोबा)

हमारे राजचिह्न में चार सिंह हैं। सामने से तो तीन ही सिंह दीखते हैं, पर हैं चार। यही अशोक का राज-चिह्न था, जो हमने भारतीय गणतंत्र के लिए स्वीकार किया। इस चिह्न का मतलब यह है कि गायें इकट्ठी होकर रहती हैं, भेड़ इकट्ठे होकर रहते हैं, लेकिन वे डरपोक हैं; इसीलिए वे इकट्ठे रहते हैं। वह अहिंसा नहीं है, वह डर है। उसमें बहादुरी नहीं है। भेड़ों के इकट्ठे होने में क्या बहादुरी है? उधर सिंह बहादुर है, लेकिन वह कभी इकट्ठा नहीं रहता है। वह सारे जंगल का बादशाह कहलाता है, लेकिन उसका लक्षण यह है कि वह प्रजा का भक्षण करता है। उसकी बहादुरी प्रजा को खाने की है। जंगल के सारे प्राणियों को जो खा जायगा, उसका नाम है राजा! इस तरह सिंह वीर हैं, लेकिन वे हिंसक हैं। इसलिए वे अलग-अलग रहते हैं। तब अशोक ने युक्ति की। उसने चार सिंहों को इकट्ठा कर दिया, याने बहादुर होते हुए भी प्रेमपूर्वक इकट्ठे रहने वाले सिंह वे बन गये! भेड़ इकट्ठे रहते हैं, लेकिन उनमें बहादुरी नहीं है। सिंह में बहादुरी है, लेकिन प्रेम नहीं है। प्रेम और बहादुरी जब इकट्ठा होती है, तब अहिंसा बनती है। अहिंसा की ताकत तब बनती है, जब शौर्य और प्रेम, दोनों एक साथ रहते हैं। इसलिए अशोक ने चार सिंह इकट्ठा करके अपना राज-चिह्न "अहिंसा का प्रतीक" बनाया, क्योंकि वह स्वयं चंड-अशोक से धर्म-अशोक बन गया था!

हम चाहते हैं कि हर एक भारतीय 'सिंह' के समान बहादुर बने, लेकिन सिंह के मुताबिक अलग-अलग न रहे, इकट्ठा रहे। यह अगर हिन्दुस्तान में होगा, तो सचमुच में क्रांति होगी।

ग्रामदान में यही हो रहा है, ग्रामदानवाले गाँवों ने यही बहादुरी दिखायी। अपनी जमीन का परित्याग किया और गाँव की ओर से जो मिलेगा, उसका प्रसाद के तौर पर स्वीकार करके सबके साथ सुख-दुख में समान रहने का तय किया। अब गाँव के सब लोगों को भूमि मिलेगी, सब लोग प्रेम से मिल-जुल कर काम करेंगे। एक बड़ा भारी त्याग उन्होंने किया और प्रेम से एकसाथ रहने का भी तय किया।

(नत्तम, मदुरा, २५-२-५७)

भगवान् की बेटी की सलाह !

भगवान् ने एक बार विचार किया कि ऐसे प्राणी का निर्माण करूँ, जो स्वर्ग तथा पृथ्वी के सभी प्राणियों में उत्तम हो! यह बात जब सत्य को मालूम हुई, तो उसने कहा—"भगवान्, यह प्राणी दंभ व बेईमानी फैलाकर आपको बदनाम करेगा।" न्याय ने कहा—"वह स्वार्थी बन कर सबको सतायेगा।" शांति ने कहा—"भगवान्! यह प्राणी जगत् के विनाश में गौरव का अनुभव करेगा।"

पर उसकी छोटी लड़की करुणा ने कहा—"पिताजी! उस प्राणी को अवश्य निर्मित कीजिये। जब आपके सब भक्त उसे सुधारने में असमर्थ हो जावेंगे, तो मैं उसे सुधारूँगी!"

करुणा की बात मान कर ही भगवान् ने उस मनोवांछित प्राणी, मानव का सर्जन किया।

टॉलस्टाय

गाँवों की ताकत कैसे बनेगी ?

(विनोबा)

(१) इसके लिए सर्व प्रथम सारे गाँव को एक करना होगा, जमीन की मालकियत मिटानी होगी, सारे गाँव को प्रेम से जमीन देनी होगी और मानना होगा कि 'यह सारी जमीन गाँव की है और उसमें मेरा भी हिस्सा है।' जैसे हवा-पानी का कोई मालिक नहीं हो सकता, वैसे जमीन का भी कोई मालिक नहीं हो सकता। पानी का अगर कोई मालिक हो जायगा, तो दुनिया की दुर्दशा हो जायगी। इसी तरह जमीन की मालकियत धर्म-विरुद्ध है, इसलिए प्रेम से सब एक हो जायँ, मिलजुल कर काम करें, तो गाँव की ताकत बढ़ेगी।

(२) दूसरी बात यह करनी होगी कि कोई भी रोजमर्रा की चीज बाहर से गाँव में नहीं आनी चाहिए। कच्चे माल का पक्का माल गाँव में ही बनना चाहिए। कपड़ा, गुड़, तेल, जूते, बटन आदि खुद तैयार कर लेंगे, तो बाजार भाव से हम बच जायेंगे।

(३) तीसरी बात तो सहज ही हो जायगी। गाँव की सारी जमीन बँट गयी, गाँव के धंधे शुरू हो गये, तो झगड़े ही मिट जायेंगे।

(४) चौथी बात यह करनी होगी कि व्यक्तिगत तौर पर न कर्जा लिया जाय, न दिया जाय। कर्जा लेने की जरूरत भी नहीं पड़ेगी। अपने गाँव में धंधे खड़े होंगे, इसलिए व्यापारी के पंजे से छूट गये। झगड़े मिट गये, तो वकीलों के पंजे से छूटे! लोगों को खाना-पीना अच्छा मिलेगा, तो बीमारी कम होगी; फलस्वरूप डाक्टरों के पंजे से छूट जायेंगे। इस तरह प्रेम से, मिलजुल कर पुरुषार्थ करेंगे, तभी गाँव सुखी होगा।

ग्रामदान करते हैं, ग्रामोद्योग शुरू करते हैं, झगड़े मिटाते हैं, तो फिर सरकार को भी आपकी चिंता करनी पड़ेगी। किसी कारण से फसल कम आयी, तो सरकार बीज ला देगी, क्योंकि अच्छी फसल हो, यह सिर्फ किसान का फर्ज नहीं है। यह तो सारे देश का काम है। ये बड़े-बड़े सेवक जितनी सेवा करते हैं, उससे कम सेवा ये किसान लोग नहीं कर रहे हैं। इसलिए गाँव अगर एक हो जाता है, तो सरकार से मदद मिल सकती है।

लेकिन इसके लिए दो चीजें आवश्यक हैं : (१) हृदय में प्रेम और करुणा चाहिए। उसके बिना समाज एकत्र नहीं रह सकता। हम आशा करते हैं कि अपने देश में प्रेम की कमी नहीं होगी, क्योंकि छोटे-छोटे गाँव भी मंदिर के इर्दगिर्द खड़े किये गये हैं। इसलिए सारा गाँव ईश्वर को समर्पित है, यह भावना अपने पूर्वजों से चली आयी है। (२) दूसरी बात, परिस्थिति के बारे में सोचना चाहिए।

(कन्नारमपट्टी, मदुरा, २२-२)

www.vinoba.in

ग्रामदान की गंगा के पावन तुषार !

(विनोबा)

···भेदरहित प्रेम यह ईश्वर का लक्षण है। प्रेम हरेक में है, परंतु हमने ही वह छोटा बनाया। हम कुछ लोगों पर प्यार करते हैं, कुछ लोगों पर नहीं। जहाँ भेद-भावना आ गयी, वहाँ ईश्वर का लोप हो गया। वहाँ ईश्वर का स्रोत नहीं है, सो बात नहीं। वह है, लेकिन वह ढँक गया है। भेदभाव ने प्रेम को ढाँक दिया है। उस ढँकने को हटाना होगा। उसीने प्रेम को ढँका है, शिव को ढँका है। उसको हटायेंगे, तो अन्दर के ईश्वर का दर्शन होगा। प्रेम ही ईश्वर है। उसे कोई लिंग का आकार दे, विष्णु कहे, कृष्ण कहे; कुछ भी कहे। उसका रूप एक ही है और वह है—भेदरहित प्रेम। जहाँ भेदरहित प्रेम है, वहाँ ईश्वर का दर्शन है। जहाँ प्रेम ढँक गया, वहाँ ईश्वर-दर्शन ढँक जायगा।

हम माताओं को यह नहीं कहते हैं कि तुम अपने बाल-बच्चों पर प्रेम करना छोड़ दो और घर छोड़ कर ईश्वर के लिए बाहर निकल पड़ो। यह गलत विचार है। हम तो उनसे कहते हैं कि तुम अपने बच्चों पर प्यार करती हो, यह अच्छा है। लेकिन सब बच्चों पर समान प्यार करो, तो तुम्हारे सामने ईश्वर प्रगट ही है। भूदान, ग्रामदान का मुख्य विचार यही है। (कुटुपट्टि, २४-२)

ग्रामदान क्या है? छोटे-छोटे गाँव होते हुए भी आज तक हम अलग-अलग हैं। सौ-डेढ़ सौ घर हों, तो भी सारे अलग-अलग। फिर बाहर के व्यापारियों, साहूकारों व डाक्टरों आदि सबकी मार खाते हैं। अपने गाँव में भी एक-दूसरे को चूसते हैं। जैसे जंगल में जानवर अलग-अलग रहते हैं, एक गुफा में शेर, दूसरे में सियार, तीसरे में भेड़िया, इस तरह अलग-अलग ही रहना है, तो एक गाँव में क्यों रहते हैं? जंगल में ही क्यों न रहें? जिस गाँव में सबकी जमीन की अलग-अलग मालकियत है, तो वह गाँव गाँव नहीं है, जंगल है! आसमान के क्या अलग-अलग टुकड़े पड़े हुए हैं? वह एक ही है। वैसे जमीन भी एक ही है। परंतु हमने उसके अलग-अलग टुकड़े बनाये और कहने लगे कि 'यह मेरा खेत', 'यह उसका।' मरने के बाद क्या यह खेत तुम्हारे साथ आयेगा? तुम चले जाओगे और तुम्हारी जमीन यहाँ ही पड़ी रहेगी। इसलिए जमीन की मालकियत बिलकुल गलत चीज है। गाँव के लोगों को यह विचार समझाते हैं, तो वे समझ जाते हैं। उनमें प्रेम की भावना है, परंतु बीच में पैसा आ गया! जहाँ पैसा आ जाता है, वहाँ प्रेम टूटने लगता है। बाप और बेटे के बीच भी पैसे के कारण कोर्ट में मुकदमे चलते हैं। शादी में भी पैसे की जरूरत पड़ती है। सबको खिलाने के लिए कर्जा लेना पड़ता है। बिना व्याज लिए साहूकार पैसा नहीं देता है। एक शादी याने जिंदगी भर की बर्बादी। पर ग्रामदान में शादी सार्वजनिक उत्सव होगा। गाँव में सभी लोग मिल कर शादी का सारा खर्चा उठा लेंगे। कर्जे का सवाल नहीं है। गाँव की जमीन का बँटवारा होगा। जमीन की मालकियत नहीं रहेगी। एक-दूसरे के साथ मिलजुल कर काम करेंगे, इसलिए झगड़े का सवाल नहीं। (करुंगलकुडि, २१-२)

मान लीजिये कि गाँव में एक हजार लोग हैं और हर मनुष्य के पीछे कपड़े पर साल भर में १० रुपये खर्च होते हैं, तो १० हजार रुपये तो कपड़े पर खर्च होंगे। इतना तो जमीन का टैक्स भी नहीं होगा। जमीन का कर हर मनुष्य को दो-तीन रुपये के लगभग देना पड़ता होगा। लेकिन कपड़े के लिए दस रुपये! इसका उपाय यही हो सकता है कि अपना कपड़ा हम खुद बनायें। ४० साल से हमें नहीं मालूम है कि कपड़े का भाव क्या है। १९१८ से हमने कातना शुरू किया। अपने आश्रम में कपास बोना, धुनना, कातना, बुनना आदि सभी काम हम स्वयं कर लेते थे। इसलिए कपड़े के बाजार-भाव का हम पर कोई असर नहीं होता था। आज तो कपास का भाव अमेरिका में तय होता है! गाँव में चाहे कपास कम हो या ज्यादा, अमेरिका में जो भाव तय होगा, उसके मुताबिक आपको रुई मिलेगी।

सारा आधार अमेरिका का। इस तरह गाँव के लोग पराधीन हो गये हैं। लोग अलग-अलग परिवारों में बँट गये हैं। इसलिए गाँव की ताकत नहीं बढ़ती है। एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य के साथ जोड़ने वाली कोई चीज यदि है, तो वह प्रेम ही है। जहाँ प्रेम नहीं है, वहाँ नजदीक-नजदीक रहेंगे, तो भी उसका कोई खास उपयोग नहीं है। इसलिए ग्रामदान के द्वारा परिवार-भावना, परिवार-प्रेम गाँव भर फैलाने का काम हमें करना है। (करुनारमपट्टी, २२-२)

जमीन की मालकियत अब टिकने वाली चीज नहीं है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक १९०० मील लंबा, १८०० मील चौड़ा पट्टा अंग्रेजों के पास अंग्रेजी में लिखा हुआ था। लेकिन वह पट्टा खत्म हो गया और वे भाग गये। कोई राजा थे, कोई महाराजा! कोई अधिराजा, तो कोई राजराजा, तो कोई राजाधिराज! ये सबके सब चले गये। अब यह सरकार क्या करेगी? उसका क्या संबंध है? क्या खेती वह करती है? अरे भाई, हमारे गाँव का कारोबार देखने की जरूरत तुम्हें नहीं है। तेरा काम है, रेलवे-पोस्ट विभाग आदि का काम ठीक से चलाना। वही तो ठीक से चला! बाबा ने वर्धा में एक लेख भेजा, तो चौदह दिन बाद मिला, जो दो दिन में पहुँचना चाहिए था! ऐसा काम करने वाले नौकर को बराबर धमकाना चाहिए। आप जिन्हें चुन देते हैं, वे जनता के नौकर ही तो हैं। हमारे गाँव में कोई मालिक नहीं हो सकता है। सारी जमीन का मालिक हमारा गाँव है, गाँव के कानून से जमीन बँटेगी। (पल्लपट्टी, २०-२)

कुछ लोग कहते हैं कि बाबा तो बिलकुल कानून उखाड़ रहा है। अरे भाई, तुम्हारे हजारों राजा हो गये और उनके लाखों कानून हो गये। किनके कानून टिके हैं? सिर्फ परमेश्वर का कानून कायम है। बाकी कौन कानून कायम है? तुम्हारे कानून को कौन पूछता है? ईश्वर के कानून पर चलेंगे। जमीन का मालिक याने क्या? माँ का मालिक क्या कोई हो सकता है? क्या मिट्टी हमने बनायी है? मिट्टी से तो हमारा देह बना है। क्या हम उसके मालिक बनेंगे? यह नहीं हो सकता। (नत्तम्, २५-२)

मछली जैसे भी कुछ लोग होते हैं, खूब घी-दूध खाते-पीते हैं, बड़ा पेट है, शरीर में चर्बी के सिवा और कुछ है ही नहीं। उनसे धूप सहन नहीं होती है। इसलिए धर्म को सहन करने के वास्ते प्रेम चाहिए। ग्रामदान वही धर्म है। प्रेम के बिना वह सहन नहीं होगा। इसलिए वह प्रेम से समझना चाहिए। ग्रामदान के गाँव में सब एक होकर रहेंगे और अपना कारोबार खुद सँभालेंगे।

कुछ लोग कहते हैं कि ग्रामदान करोगे, तो फलाने लोग मदद करेंगे, हम मदद करेंगे। याने हम मालिक बनेंगे! पर हम आपको मदद करने वाले नहीं हैं, गुरु का काम है ज्ञान देना। आपके गाँव का मसला हल करने का काम गुरु का नहीं है। वे चुनाववाले कहते हैं कि हमको चुनोगे, तो हम आपका उद्धार करेंगे। हम कहते हैं कि अपना उद्धार आप ही करोगे और ग्रामदान करोगे, तो आप अपना उद्धार कर सकोगे। हम आपके उद्धार करने वाले कोई नहीं हैं। इस विचार को आप समझें और ग्रामदान की घोषणा करें। (पल्लपट्टी, २०-२)

संन्यासाश्रमी का अर्थ यह नहीं कि बाल कटवा दिये या दाढ़ी बढ़ा दी, तो संन्यासी हो गया। ये हमारे अडिगळार संन्यासी हैं कि नहीं, उनकी परीक्षा करनी है, तो उनको तमाचा लगाओ। तमाचा मारने से अगर उनको गुस्सा आता है, तो वे संन्यासी नहीं हैं संन्यासी की परीक्षा है—शम, शांति। ग्रामदान से हम शमरूपी इस संन्यास-आश्रम की स्थापना करना चाहते हैं। (शाकोटै, १४-२)

अब एकाध ग्रामदान मिलने से काम नहीं चलेगा। चारों ओर से ग्रामदान मिलने चाहिए। वह बड़ा भारी और सुन्दर रचनात्मक कार्य होगा। लोग पंचवर्षीय योजना की बात कहते हैं, लेकिन जब तक यह बुनियादी चीज नहीं है, ऊपर-ऊपर के प्लॅनिंग का कोई उपयोग नहीं है। इसलिए यह भूदान, ग्रामदान, सारे सामाजिक रचनात्मक कार्य की बुनियाद है।

ग्रामदान कोई छोटी चीज नहीं है। किसी गाँव पर हमला करके दस-बीस लोगों की क़त्ल करके गाँव वालों की कुल जमीन छीन लेना, यह एक प्रकार की विजय हुई और गाँव के लोगों को प्रेम से समझा कर व प्रेम से अपनी जमीन सारे गाँव को समर्पण करने के लिए प्रेरित करना, यह दूसरे प्रकार की विजय है। यही धर्म-विजय है और यही आपको करना है। (नत्तम, २५-२)

गाँवों की आवाज !

मैं गाँवों में घूमता हूँ। आज गाँव का आदमी चुनाव से पनाह माँग रहा है! जहाँ भुखमरी, गरीबी, चिथड़े, टूटे मकान, गिरा हुआ स्वास्थ्य और बढ़ते हुए व्यसनों का वास है, वहीं दलों के लोग अपने चुनाव-हथकंडों से गाँवों में फूट के बीज डाल कर अपने पीछे फूट व आपसी द्वेष का एक बड़ा दौर छोड़ जाते हैं। यह तो घावों पर नमक छिड़कने के समान हुआ। परिस्थिति इससे और भी खतरनाक बन जाती है। हमारे चुनाव राष्ट्रहित तथा मानव-सेवा की दृष्टि से कहाँ तक ठीक हैं, इस प्रश्न का आज लोगों के मन में जोरों से मंथन हो रहा है।

राष्ट्रनायकों को इसका उत्तर समय रहते देना होगा। आज विनोबा "चार बोलें, तीन बोलें परमेश्वर" नहीं, "पंच बोलें तो परमेश्वर" की प्रथा डालने की जो चेतावनी दे रहे हैं, वह मानों करोड़ों ग्रामीण जनों की ही आवाज है। इसकी अवहेलना करना हमारे लिए लाभप्रद न होगा।

उमरिया, हमीरपुर, २१-२-'५७ —(बाबा) राघवदास

www.vinoba.in

क्रांति के लिए अलविदा !

(धीरेन्द्र मजूमदार)

सन् सत्तावन् का संकल्प पूरा करने के लिए श्रम-भारती-परिवार के जो लोग बाहर जा रहे हैं, उनका इस साल के लिए यह आखिरी शुक्रवार है। शुक्रवार संसार का एक महान्-पुण्य-दिवस है। बापू का संकल्प था कि सभी सम्प्रदाय मिल जायँ। उन्होंने अपने महा-प्रयाण का दिन भी उसी शुक्रवार को चुना, जो ईसा और मुहम्मद के अनुयायियों के लिए पुण्य-दिवस रहा है। तो, आज आपके लिए भी यह एक सौभाग्य का ही दिन है।

ध्यान रहे कि आज के दिन इस युग की महान् क्रांति में आप लोग एक विशेष कदम उठा रहे हैं। हर एक भाई, बहन और बच्चे भी सोचेंगे कि यह क्या है? यह तो आप सब जानते ही हैं कि क्रांतिकारियों की संपत्ति महान् शारीरिक कष्ट और मानसिक सुख ही होता है। यहाँ कुछ भाई-बहन पूछते थे कि यात्रा में बच्चों को दूध मिलेगा क्या? मालूम होता है कि आप लोग क्रांति का इतिहास पढ़ कर भी भूल जाते हैं! पुराने जमाने में हिंसात्मक क्रांतियाँ हुआ करती थीं। उन दिनों क्रांतिकारी को सपरिवार जंगलों में भटकना पड़ता था। आप लोग तो गाँव-गाँव घूमेंगे, गाँव के लोग आपका स्वागत करेंगे और अपने घरों में टिकायेंगे। आप जंगलों में भटकेंगे नहीं। फिर भी आपके दिल के एक कोने पर भी अगर घबड़ाहट है, तो आपको क्रांति-देवी का क्या हाल होगा? अगर क्रांतिकारी के मन में अपने इष्ट-देव के प्रति दुविधा होगी या वे तकलीफों से घबड़ायेंगे, तो वह जड़वत् होकर हार जायेगा। मैं अक्सर कहा करता हूँ कि मनुष्य को दो में से एक स्थिति को चुनना होगा। या तो वे दिल्ली के बादशाह को सलाम करें या अपने बच्चे के हाथ से घास की रोटी भी बिल्ली को ले जाते हुए देखते रहें! आप दूध के बारे में पूछते हैं। दूध नहीं, गेहूँ की रोटी नहीं, ज्वार, बाजरा और मकई की रोटी भी नहीं, क्रांति के दौरान में आपके बच्चों के मुँह से घास की रोटी भी छीनने की नौबत आ सकती है, इसका ध्यान आपको निरन्तर रहे। अगर इन बातों से घबड़ाते हैं, तो अच्छा यही होगा कि हम सब चल कर दिल्ली के बादशाह को सलाम करें। यानी समाज की पुरानी मान्यताओं को स्वीकार करें। लेकिन हम लोगों ने संकल्प-पूर्वक उस रास्ते को तो छोड़ दिया है!

आप सबोंने क्रांति की राह पर आगे बढ़ने का संकल्प किया है, तो क्रांति के बारे में आपकी दृष्टि भी साफ होनी चाहिए। पहले लोग समझते थे कि गरदन काटने से क्रांति होती है। आज भी आम मान्यता वही है। लेकिन अब लोग समझ रहे हैं कि गर्दन काटने से क्रांति नहीं होती है। कम्युनिस्ट लोग भी धीरे-धीरे इस बात को समझ रहे हैं। विनोबाजी की पदयात्रा के कारण सर्वोदय-विचार वाले सेवकों में एक दूसरी बात फैल गयी है कि चक्कर काटने से क्रांति होती है। अगर चक्कर काटने से क्रांति होती, तो देश में ऐसे घूमने वाले साठ लाख क्रांतिकारी, साधु-संतों के रूप में मौजूद ही हैं! फिर हम अधिक क्या करेंगे? चक्कर काटने वाले लोग यहाँ तक समझ बैठते हैं कि दफ्तर में बैठकर काम करने वाले या दूसरे रचनात्मक काम करने वाले क्रांतिकारी नहीं हैं। दफ्तर तथा दूसरे स्थायी कार्यक्रम चलाने वालों के मन में भी रह-रह कर यह ग्लानि होती है कि वे क्रांति नहीं कर रहे हैं। वस्तुतः क्रांति किसी कर्मकांड में छिपी हुई नहीं है, क्रांति तो एक जीवन-दर्शन, मानसिक-वृत्ति तथा कार्य-शैली है।

अतएव जो भाई-बहन यात्रा में जा रहे हैं और जो लोग श्रम-भारती के अहाते में बैठ कर काम करने वाले हैं, उन्हें सोचना होगा कि क्रांति आपकी वृत्ति तथा शैली में है या नहीं? यात्रा करने वालों की वृत्ति अगर निष्प्राण हो, तो उनकी यात्रा के नतीजे से क्रांति नहीं होगी और दफ्तर में बैठ कर काम करने वालों की वृत्ति तथा कार्यक्रम अगर क्रांति के अनुकूल होगा, तो उनके कामों से भी क्रांति हो जायेगी। जो लोग देहातों में घूमेंगे, उनका रहन-सहन, रंग-ढंग तथा बातचीत से क्रांति-दर्शन निकलेगा, तो जनता को भी आप अपने रंग से रंग सकेंगे। आप जनता के घरों में मेहमान होंगे, उनके सुख-दुःख में शामिल होंगे; वे औक़ात भर जो कुछ प्रसाद देंगे, उससे आपको सुखी रहना होगा। अपने दूसरे खर्चों के लिए न संचित-निधि से लेना है और न किसीसे माँगना है। उसे अपने श्रम से पैदा करना है। कांचन-मुक्त समाज के लिए क्रांति करने वाले कांचन-दान पर आधारित नहीं रह सकते। आपको मेहनत से कमाने के लिए दो रास्ते हैं—साहित्य-बिक्री का कमीशन तथा किसानों के खेतों की कटनी की मजदूरी करने का काम। खर्च सामूहिक होगा। मजदूरी करने की कमाई भी सामूहिक रहेगी!

दफ्तरवालों को भी सोचना होगा कि सन् '५७ में उनके ऊपर क्या जिम्मेदारी है? उनकी जिम्मेदारी बढ़ती है। श्रम-भारती के इतने लोग बाहर जा रहे हैं। उनका सारा काम यहाँ के लोगों को अब सम्हालना है। खाली उनका ही काम नहीं, देश भर में औरों के घूमते रहने के कारण भी आपका काम बढ़ेगा। इसलिए आपको दूना काम करना है। चार घंटा शरीर-श्रम करने के बाद जो बीस घंटे बचते हैं, वे सब दफ्तर के लिए हैं। हो सकता है कि नींद लेने के लिए भी कम वक्त मिले। ऐसे मौके क्रांति के इतिहास में बहुत आते हैं। सन् '३० की बात इस समय याद आ रही है। गांधी-आश्रम, मेरठ के अधिकांश कार्यकर्ता जेल चले गये थे। बाकी लोग मस्ती के साथ कुल काम चलाते थे। और भी कई मौके याद आ रहे हैं कि काम करते-करते रात गुजर गयी और प्रार्थना की घंटी बज गयी। अगर आपमें क्रांति की मस्ती है, तो ऐसे मौके पर भी आप मस्त रहेंगे। रामचन्द्र के अनुसरण में लक्ष्मण के दिल में आग थी, तो चौदह वर्ष जागरण करने पर भी उसकी शक्ति का क्षय नहीं हुआ!

आप बड़े-छोटे, बच्चे-कच्चे, सब जा रहे हैं। मुझको भरोसा है कि सत्तावन् के अंत तक सब डटे रहेंगे। ज्यादह छोटे बच्चों को तो मैं बीच में वापस बुला लूगा। लेकिन आप सब भाई-बहन और बड़े बच्चे निरन्तर आगे बढ़ते रहेंगे। अगर किसीकी हिम्मत टूटती है, तो घायल फौज को जैसे अस्पताल में वापस लाते हैं, वैसे ही आपको वापस लाऊँगा। आपको मालूम है न कि हिंसा की क्रांति-सेना में से जब किसीकी लाश गिरती है, तो उसे मोटर पर उठा कर लाया जाता है। हिंसात्मक सिपाही का शरीर मरता है, लेकिन अहिंसात्मक सिपाही का दिल मरता है। मैं निरन्तर यही कामना करता रहूँगा कि आपका दिल हमेशा जिन्दा रहे, आगे बढ़ता रहे और मुझे किसीके लाश-दिल को उठा कर लाना न पड़े! आज के पुण्य दिन का आशीर्वाद लेकर आप जा रहे हैं। ईश्वर आप सबको शक्ति दे।*

* सन्' ५७ की क्रांति में अपने को होमने का श्रमभारती, खादीग्राम ने संकल्प किया और छोटे-छोटे छात्र, शिक्षक, स्त्रियाँ पदयात्रा के लिए निकल पड़े! यह उनकी बिदाई के निमित्त हुआ भाषण है, जो खादीग्राम में ता० २२ फरवरी को हुआ। बरियारपुर में इसका समारोह हुआ। उसके विवरण एवं मुख्य भाषण ता० १ मार्च के अंक में छप गये हैं।

भूदान-क्षेत्र में श्रमदान का स्वरूप

(ज० केशवराव)

"भूदान-यज्ञ की भूकान्ति में बेजमीन लोगों का कर्तव्य क्या है?" यह प्रश्न श्रीमती चेस्टर बाउल्स (भारत के भूतपूर्व अमेरिकन राजदूत की पत्नी) की ओर से पूछा गया था। उसका निम्नलिखित उत्तर विनोबाजी से मिला :

> "बेज़मीन लोगों को मालूम होना चाहिए कि उनके पास परिश्रम की भारी शक्ति है। इसलिए उनको श्रमदान के लिए आगे आना चाहिए, अर्थात् उनको अपनी परिश्रम-शक्ति को कुछ माँगे बिना परहित के लिए देना चाहिए। उससे नैतिक बल उत्पन्न होता है। उनको यह नहीं समझना चाहिए कि वे केवल लेने के लिए हैं। उनमें श्रमदान की योग्यता है और प्रेम से यह करना चाहिए।"

भूदान-यज्ञ आरंभ होकर छह वर्ष हो रहे हैं। वास्तव में भूमिहीनों की ओर से अभी कोई अमली काम इस यज्ञ में नहीं हुआ। श्रमदान किस प्रकार से हो और उसकी रूपरेखा क्या रहे, यह विचारणीय प्रश्न है।

स्पष्ट है कि भूमिहीन जब तक कर्तव्यपूर्वक इस यज्ञ में सम्मिलित नहीं होंगे, उस समय तक समग्र दृष्टि से भूक्रांति सफल नहीं बन सकती है। इसलिए इस ओर कुछ-न-कुछ सोचना और श्रमदान को सामूहिक रूप देना ही पड़ेगा।

अतः प्रथमतः गाँव में ग्रामोदय-समिति बना कर उसमें श्रमदान के विषय को रखा जाय। बेज़मीन लोगों में जो तैयार हैं, उनकी सूची बनायी जाय। जो लोग इस प्रकार श्रमदान का संकल्प करेंगे, हर समय खेती आदि का काम करने के लिए वे संसिद्ध रहेंगे। इससे गरीब किसानों को, जिनके पास काश्त के समय कोई मदद को नहीं मिलता, बहुत कुछ लाभ होगा। साहूकार के पंजे से भी वे कुछ हद तक बच जाते हैं। अगर कोई किसान मुफ़्त में काम नहीं लेना चाहे, तो उनसे यह कहा जा सकता है कि फ़सल पर प्रतिफल समाज को दें। ऐसे श्रमदाताओं को संघटित करने के लिए और उनके जीवन-निर्वाह के लिए सम्पत्तिदाता अन्नदान दे सकेंगे। खादी और ग्रामोद्योग संस्थाएँ योजनापूर्वक निर्माण-कार्य देकर सहायता भी दे सकती हैं। इस प्रकार के श्रमदान से नैतिक शक्ति ही बनेगी

---

www.vinoba.in

पोचमपल्ली से पलनी तक भूदान-यज्ञ की प्रगति

(विमला बहन)

किसी भी क्रांतिकारी आंदोलन को यथार्थ रूप से समझने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उसके राष्ट्रीय एवं आंतर्राष्ट्रीय सन्दर्भ का हम अध्ययन करें, क्योंकि क्रांति का उद्देश्य ही सन्दर्भ बदलना रहता है । जहाँ तक आंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति का सम्बन्ध है, तीन बातें मुख्यतया सामने आती हैं :

(१) विज्ञान के कारण जो विविध प्रकार की शक्तियाँ मानव को उपलब्ध हो गयी हैं, वे धीरे-धीरे सार्वत्रिक बनती जा रही हैं। मानवीय जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं का—अन्न, वस्त्र तथा अन्य वस्तुओं का—इतनी प्रचुर मात्रा में उत्पादन किया जा सकता है कि समूचे संसार में, किसी भी देश के किसी भी व्यक्ति को, अभाव में तथा दारिद्र्य में जीवन व्यतीत करने की अब कोई आवश्यकता नहीं रह गयी है । इसलिए इस पृथ्वी पर से गरीबी, भुखमरी एवं हर प्रकार का अभाव मिट जाना चाहिए—यह आकांक्षा मानवमात्र के हृदय में जाग उठी है ।

(२) संसार में प्रातिनिधिक लोकसत्ता का चारों ओर बोलबाला है । जनता का राज हो, इस सिद्धांत को राजनीतिक क्षेत्र में एक स्वयंसिद्ध सत्य की मान्यता प्राप्त हुई है। जनता के राज का आधारभूत तत्व है—मानवीय व्यक्तित्व का सम्मान हो । मनुष्य की बुद्धि की इज्जत हो । मनुष्य का जीवन चरम मूल्य समझा जाय । समाज-परिवर्तन के लिए हो, चाहे अन्य किसी प्रकार से मानवीय सभ्यता का विकास करने के लिए हो, मानव के साथ जबरदस्ती करना, उसको मजबूर बनाना या उसकी हत्या करना अवैज्ञानिक है, अनैतिक है तथा क्रान्ति के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विषम साधन है, इसका भान विचारकों को, नेताओं को एवं हर देश के राज्यकर्ताओं को हो गया है ।

ऐतिहासिक आवश्यकता

(३) तीसरी बात यह है कि अब मानवीय जीवन की समस्याओं का समाधान हिंसा की मार्फत या संघर्ष के द्वारा नहीं हो सकता । सारा संसार जब भौतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से एक छोटा-सा परिवार बन गया है; जब मानवमात्र एक-दूसरे का पड़ोसी बन गया है, जब जाति, धर्म, देश, राष्ट्र वैचारिक पंथ और पक्ष, इत्यादि भेदों की दीवारें विज्ञान के कारण ढह चुकी हैं, तो हर प्रश्न का समाधान स्नेह, सहयोग एवं अहिंसा के द्वारा ही हो सकता है—ऐसी दृढ़ निष्ठा निर्माण होना अनिवार्य हो गया है । वैसी निष्ठा निर्माण होने के लिए किसी-न-किसी देश में, अहिंसा के आधार पर, बंधुत्वभावना से, सबका सहयोग प्राप्त करते हुए समाज-परिवर्तन का प्रयत्न होना एक ऐतिहासिक आवश्यकता बन गयी है ।

इस जागतिक परिस्थिति के कदमों में कदम मिलाने वाली परिस्थिति हमारे अपने देश में स्वाधीनता के बाद कायम हुई । अर्थात् इस देश में बालिग मताधिकार के आधार पर प्रातिनिधिक लोकसत्ता का निर्माण किया गया । जागतिक विचार प्रवाह के अनुकूल विचार-प्रवाह इस देश के जनमानस में खेलने लगे हैं। देश के सभी राजनीतिक पक्षों ने गरीबी-अमीरी समाप्त करने का संकल्प किया है । समाजवादी समाज-रचना यह ध्येय देश ने अपना लिया है ।

सिर्फ किस रास्ते से कदम आगे बढ़ाये जायँ, किन साधनों का उपयोग किया जाय, इसका निश्चय नहीं हो रहा था । राष्ट्रपुरुष की बुद्धि में, कृषि-आधारित अर्थनीति का अनुसरण करें या उद्योग-धंधों के आधार पर संयोजित अर्थनीति का अनुसरण करें, ग्रामोद्योग द्वारा विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का अनुसरण करें या बड़े पैमाने पर बड़े उद्योग-धंधों द्वारा केन्द्रित अर्थव्यवस्था का अनुसरण करें,इसका कोई निश्चय नहीं हो रहा था । गरीबी-अमीरी समाप्त करने के लिए टैक्सेशन, कॉनफिस्केशन तथा एक्सप्रोपरिएशन का अवलंब किया जाय या नहीं, यह भी एक प्रश्न सामने खड़ा था । मालकियत बिखर जाने के कारण समाज में छोटे मालिकों की संख्या बढ़ गई थी । बड़े मालिक और गैरमालिक कम संख्या में रह जाने के कारण उनका विधानसभा या लोकसभा में कोई खास प्रभाव नहीं रहा । कानून बनाने की शक्ति तो अनायास ही छोटे मालिकों के हाथों में चली गई थी । यह संभव न था और नहीं है कि छोटे मालिक, मालकियत को कानून द्वारा मिटाने का पुरुषार्थ करें । क्योंकि छोटी मालकियत ही पूंजीवाद का आधार है और बहुसंख्य छोटे मालिकों के हाथों में पूंजीवाद को समाप्त करने की कुंजी है, यह ज्ञान छोटे मालिकों को था ही नहीं ।

राजनैतिक पक्ष सत्ता की होड़ में इतने मशगूल थे कि जनता को समझाकर उचित परिवर्तन द्वारा यह सब कराने को उनके पास फुर्सत नहीं थी ।

ऐसी परिस्थिति में विनोबा ने, ईश्वर की प्रेरणा पाकर, सन् १९५१ में भूदान-यज्ञ-आन्दोलन शुरू किया ।

अहिंसा की मार्फत, जनता के सहयोग से, सर्वांगीण क्रांति लाने का ध्येय सामने रखकर उन्होंने कदम उठाया ।

अहिंसात्मक क्रांति का एकमेव साधन विचारपरिवर्तन ही रह सकता है । निरपेक्ष वृत्ति से शुद्ध विचार समझाना, प्रेमपूर्वक हृदयों को वश कर लेना, इसके सिवा भला अहिंसा के अन्य कौनसे साधन हो सकते हैं ? विनोबा को तेलंगाना में दो महीनों में बारह हजार एकड़ जमीन मिली । प्रधान मंत्री श्री जवाहरलालजी को साश्चर्य आनंद हुआ । एक सत्पुरुष फिर से भारत की धरती अपने पावन चरणों से नापने लगा और जनता उस सन्त के साथ हर्षोल्लास में मगन होकर चलने लगी, दान देने लगी, यह देख कर देश चौंक उठा । श्री जवाहरलालजी ने विनोबा को दिल्ली बुलाया । भूमि का दान माँगते हुए विनोबा पैदल दिल्ली गये । दिल्ली से उत्तर-प्रदेश गये। वहाँ एक वर्ष में एक लाख एकड़ भूमि छोटे-बड़े सभी मालिकों ने मिल कर उनको दी । यह अद्भुत चमत्कार देख कर अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ ने भूदान-यज्ञ आंदोलन के चालन का भार उठा लिया । हजारों कार्यकर्ता विनोबा के इर्दगिर्द खड़े होने लगे । प्रान्त-प्रान्त में समितियाँ बन गयीं । गांधी-स्मारक-निधि ने आंदोलन को आर्थिक मदद दी । फिर राजनीतिक पक्ष सजग होने लगे । अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने इस आन्दोलन को अपना नैतिक समर्थन प्रदान किया । सक्रिय सहयोग का आश्वासन दिया । प्रजा-समाजवादी पक्ष ने भी नैतिक-समर्थन घोषित करके सहयोग का आश्वासन दिया । जनसंघ के, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के तथा साम्यवादी पक्ष के कार्यकर्ता व्यक्तिशः सहयोग देने लगे ।

सन् १९५३ की बात है । विनोबा तब बिहार में प्रवेश कर चुके थे । बिहार-कांग्रेस कमेटी तथा कार्यकर्ता एकाग्रचित्त से विनोबा की मदद करने लगे थे । ऐसे सुअवसर पर श्री जयप्रकाश नारायण इस आन्दोलन में शामिल हुए । भौतिकवाद से मनुष्य को सत्प्रेरणा नहीं मिल सकती, इस अनुभव से उन्होंने सत् प्रेरणा के नये आधार खोजना शुरू कर दिया था । भूदान-यज्ञ-आन्दोलन में उन्हें क्रान्ति की नयी प्रक्रिया के दर्शन हुए । उन्हें विज्ञान तथा अध्यात्म के समन्वय का रास्ता दिखाई देने लगा । श्री जयप्रकाश नारायण शामिल हुए, इतना ही नहीं, लगभग १॥ वर्ष आन्दोलन में काम करने के बाद इस विधायक क्रान्ति के लिए उन्होंने जीवनदान दिया । उनसे प्रेरणा पाकर सैकड़ों लोगों ने अपने जीवनदान की घोषणा की । आन्दोलन में नई चेतना पैदा हुई । बिहार में २४ लाख एकड़ भूमि लगभग दो ढाई वर्षों में प्राप्त होने के बाद विनोबा ने बंगाल में प्रवेश किया और नया मंत्र देश के सामने रखा । इस देश में उत्पादन के साधनों का कोई व्यक्ति मालिक न रहे, उत्पादन के साधनों पर समाज की मालकियत होगी, ऐसा आत्म-प्रत्ययपूर्वक कहकर उन्होंने भूमि के ग्रामीकरण की माँग पेश की ।

माँग पेश होनी ही थी कि गाँव के गाँव ग्रामीकरण के प्रयोग के लिए स्वेच्छा से आगे बढ़ने लगे । उड़ीसा में उनको लगभग १२०० गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए । कोरापुट जिले में तो ६००गाँव–एक ही जिले–में प्राप्त हुए । उन गाँवों में सामूहिक स्वामित्व, गृहोद्योग, ग्रामोद्योग, बुनियादी शिक्षा, इत्यादि ग्रामराज्य के आदर्शों का प्रयोग करने के लिए सर्वोदय-प्रोजेक्ट का कार्यक्रम बनाया गया । तपस्वी कर्मयोगी श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे को संचालन का भार सौंप कर विनोबा उड़ीसा से आंध्र की ओर आगे बढ़े । उड़ीसा के कार्यकर्ता दुगने उत्साह से नये प्रयोग में जुट गये ।

इस दरम्यान देश में भाषावार प्रांत रचना के कारण एक तूफान खड़ा हुआ । लोगों में कटुता पैदा हुई । उग्र स्वरूप के झगड़े आये दिन होने लगे । गुंडों के डंडे चलने लगे । पुलिस की लाठी और गोली चलने लगीं । लूटपाट, मारपीट, सार्वजनिक सम्पत्ति का विनाश इत्यादि बातें खुलेआम सर्वत्र होने लगीं । इस तूफान में भूदान-यज्ञ-आन्दोलन का काम कैसे चल सकेगा, ऐसी आशंका आन्दोलन के हितचिन्तकों के दिल में पैदा हो रही थी । लेकिन क्या बम्बई और क्या गुजरात, क्या पंजाब और क्या महाराष्ट्र, हर प्रांत में क्रान्ति की ज्योति स्थिर प्रकाश से समाज जीवन को आलोकित करती रही । राष्ट्रीय एकता का एकमात्र आवलंबन बन कर, भूदान-यज्ञ ने इस देश की अत्यन्त मौलिक सेवा की । भाषावाद, जातिवाद एवं प्रान्तवाद से ऊपर उठने में इस आन्दोलन ने भारतवर्ष की अमर सेवा की ।

इधर भूदान-यज्ञ-आन्दोलन का पुष्प खिलता चला जा रहा है । भूमिदान, सम्पत्तिदान, श्रमदान, समयदान, जीवनदान इत्यादि खुड़ियाँ एक के बाद एक खिलती गयीं और यह आन्दोलन सर्वस्पर्शी, जीवनव्यापी बन गया । देहात और शहर, दोनों में फिर एक बार जागृत जनशक्ति करवटें बदलने लगी । स्त्री-पुरुष, युवक-युवतियाँ, शिक्षक-छात्र, मालिक-गैरमालिक इत्यादि सभी लोग आन्दोलन की ओर आकर्षित हुए । अनुभव हुआ कि रा पुरुष की नसों में नया खून दौड़ने लगा है, चेहरे पर नई ताजगी आयी है ।

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ-आन्दोलन ने क्या कार्य किया, इसका संक्षेप में विवरण निम्न-लिखित प्रकार का है :

राजनीति : १—लोकशाही का मूल आधार लोकशक्ति है। जनता में उसका प्रत्यय जाग्रत किया। उसमें पुरुषार्थ की प्रेरणा जगायी।

२—लोकशाही सफल बनाने के लिए सरकार की सर्वंकष सत्ता के बदले जनता का जीवनव्यापी सर्वस्पर्शी विधायक पुरुषार्थ अनिवार्य है, यह लोकनीति का सूत्र समझाया।

३—पक्षातीत लोकशाही का विचार देश के सामने आया।

अर्थनीति : १—उत्पादन के साधन सौदे की वस्तु नहीं हैं, संग्रह की चीज नहीं हैं, वे उत्पादन के साधनमात्र हैं और इसी नाते उनका समाज में विनियोग होना चाहिए—यह क्रांतिकारी सूत्र अगढ़, अशिक्षित ग्रामीणों तक पहुँचाया।

२—उत्पादन के साधन अनुत्पादक के हाथ में रहना गलत है। इसलिए अनुत्पादक का स्वामित्व समाप्त करना एवं उत्पादक के हाथ में उन साधनों को सौंप देना हमारा धर्म है, यह मूलभूत क्रांतिकारी सिद्धान्त गाँव-गाँव तक पहुँचाया।

३—उत्पादन के साधनों पर व्यक्ति का स्वामित्व होना गलत है, उससे संग्रह का लालच, शोषण का प्रलोभन इत्यादि संघर्ष के बीज समाज-रचना में अनायास पैदा होते हैं, इसलिए उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व समाज का रहे, यह गंभीर विचार ग्रामीणों के लिए सुलभ कर दिया।

४—तात्पर्य, स्वामित्व के आधार बदलने के लिए जनमानस अनुकूल बनाया। बदलने की पद्धति, साधन एवं प्रक्रिया का प्रात्यक्षिक देश के सामने रखा।

५—अपरिग्रह को सामाजिक मूल्य में परिणत किया।

सांस्कृतिक : १—क्रांति की प्रक्रिया में अहिंसा, बंधुत्वभाव एवं सहयोग को दाखिल किया; अर्थात् इनको जनजीवन में सामाजिक मूल्यों की प्रतिष्ठा दिला दी।

२—मनुष्य की मूलभूत सत्प्रवृत्ति पर विश्वास ही आदर्श समाज-रचना की सच्ची नींव है, यह समझा कर आस्तिकता को समाज-परिवर्तन के साधन में परिणत किया।

३—सहअवस्थान पर्याप्त नहीं है, मनुष्यों के स्वयंप्रेरित सहजीवन के लिए परस्पर-विश्वास एवं स्नेह अनिवार्य है, यह दिखलाते हुए नया स्नेह-दर्शन संसार के सामने रखा। आंतर्राष्ट्रीय मैत्री एवं शांति के लिए 'स्नेह' एकमात्र आलंबन है, इसका भान जगाया।

४—लोकशिक्षण द्वारा विचार-परिवर्तन एवं हृदय-परिवर्तन क्रांति का अमोघ साधन है, इसका भी प्रात्यक्षिक संसार के सामने रखा।

गत महीने में पहली में अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ की सभा हुई। उस सभा में एक महत्त्वपूर्ण निर्णय किया गया। आज तक गांधी स्मारक निधि की मदद से अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ इस आन्दोलन का संचालन करता था। पवनी में यह निश्चय हुआ कि अब आंदोलन तंत्र-मुक्त तथा निधि-मुक्त बनेगा, भूदान की प्रांतीय समितियाँ विसर्जित होंगी, कार्यकर्ताओं को स्वाश्रयी बन कर काम करना पड़ेगा।

ता० १ जनवरी १९५७ से भूदान-यज्ञ आन्दोलन की जिम्मेदारी इस देश के हर एक जिम्मेवार नागरिक पर आ गयी है। यदि हम भारतवर्ष में लोकतंत्र को सफल बनाना चाहते हैं; यदि अहिंसा से जीवन के प्रश्न हल करना सहज-सुलभ है, इसका प्रात्यक्षिक दुनिया के सामने रखना चाहते हैं, यदि विश्वबन्धुत्व को इसी धरातल का एक व्यावहारिक सांस्कृतिक मूल्य बनाना चाहते हैं, तो हमें इस अभिनव वैचारिक क्रांति में अपना हाथ बँटाना होगा।

बाबा की प्रेम की नौकरी

बाबा ने भूदान-समितियाँ क्यों तोड़ीं? इसलिए कि सारे पेन्शनर्स, शिक्षक अपनी तनख्वाह के साथ, असेंबली के लोग वेतन के साथ, छुट्टियों में बाबा का काम करें। पाँच महीने की तो असेंबली रहती है। फिर सात महीने की तनख्वाह ज्यादा क्यों दी जाती है? तो, बाबा की नौकरी के लिए! यह सब उन्हें समझाने की बात है। प्रेम से समझाना है। हमारा विश्वास है कि ऐसी हवा तैयार हो रही है।
(इडीयापट्टी, त्रिची, ११-१-'५७)

भूदान-आन्दोलन और बहनें

(मोहनलाल सिंह)

हमने राजनैतिक आजादी की मंजिल तो तय कर ली है, लेकिन अभी आर्थिक आजादी की मंजिल तक हम नहीं पहुँच सके हैं। आर्थिक आजादी का मतलब है, देश के एक-एक बच्चे की आजादी—उसकी शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक शक्तियों का समुचित विकास। इस मंजिल तक पहुँचने और लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें सामूहिक शक्ति लगानी होगी। एकांगी शक्ति निरर्थक होती है। भूदान-आन्दोलन का एक पहिया समान गति से आगे नहीं बढ़ सकता है। आज हमारी विपुल शक्ति हमारे घरों की दीवारों के अन्दर कैद है। हमें उस शक्ति को जगा कर बाहर लाना चाहिए। भूदान-आन्दोलन में माताओं और बहनों का विशेष स्थान है। उनके बिना इस आन्दोलन का, जन-मानस में, जितना व्यापक और गहरा प्रवेश होना चाहिए, उतना नहीं हो पा रहा है।

विचार-प्रचार और जन-सम्पर्क ही भूदान-आन्दोलन की बुनियाद है। हमारे विचार का बीज जितना गहरा जायगा, उतनी ही मजबूत शक्ति तैयार होगी। खेद है कि इस दिशा में महिलाओं की शक्ति जगाने की ओर हमारा ध्यान अब तक नहीं के बराबर गया है। बहनें बड़ी सरलता से सर्वोदय-विचार को घरों में चक्की-चूल्हे तक पहुँचा सकती हैं। पुरुषों की अपेक्षा बहनें कर्तृत्व में सर्वोदय के अधिक निकट हैं, क्योंकि उनमें त्याग की भावना पुरुषों से कहीं अधिक है। उन्हें केवल इस त्याग-शक्ति का भान कराना है।

एक बहन एक सप्ताह घूम कर विनोबाजी को रिपोर्ट देने आयी कि उसने एक सप्ताह की अपनी पद-यात्रा में कुछ एकड़ जमीन और चार ग्रामदान प्राप्त किये हैं। विनोबाजी ने हँसते हुए कहा—"लोग इन्हें 'अबला' कहते हैं। हमारी समझ में नहीं आता कि इन्हें 'अबला' क्यों कहा जाता है? अब देखो इस बहन को। कहाँ से इसे बल मिला? यह एक धर्मकार्य का बल है। यह 'अबला' नहीं, 'सबला' है।"

उड़ीसा-प्रदेश की यात्रा में हमने वहाँ की बहनों को देखा कि वे कितनी सादगी और विचार-निष्ठा से इस धर्मकार्य का प्रचार करती हैं। कोरापुट के घने जंगल, उनमें रहने वाले वन-पशुओं की गंभीर गर्जना, पहाड़ों से निकले हुए जल-प्रपातों का हहर-हहर शब्द और आसमान से बातें करने वाले ऊँचे पहाड़ों के बीच बसे हुए छिट-पुट आदिवासी गाँवों में जिस निर्भीकता और लगन से वहाँ की बहनें काम करती हैं, उसे देख कर आश्चर्य होता है। उड़ीसा में भूदान-कर्मियों में जितने पुरुष होंगे, उनसे बहनों की संख्या कम नहीं है।

यदि हम चाहते हैं कि बहनों की इस महान् शक्ति का उपयोग हो, तो उन्हें आगे बढ़ने का पूरा मौका देना चाहिए और उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए। पुरुषों के प्रति उनकी शिकायत है कि वे उन्हें आगे बढ़ने नहीं देते। कांजीवरम्-सर्वोदय-सम्मेलन में बिहार के कार्यकर्ताओं के बीच जब विनोबाजी बोल रहे थे, तो एक बहन ने पूछा : "राजाजी (श्री राजगोपालाचारीजी) ने उस दिन कहा कि राज्य का काम चलाना जितना कठिन है, उससे ज्यादा कठिन है, सर्वोदय का काम। लेकिन मैं समझती हूँ कि सर्वोदय का काम इतना आसान है कि हम-जैसी छोटी लड़कियाँ भी उसे कर सकती हैं। लेकिन आज की पूँजीवादी व्यवस्था में लोग कहते हैं कि बहनें यदि भूदान का काम करती हैं, तो खर्च ज्यादा पड़ता है, क्योंकि बहनें गाँवों में अकेली नहीं घूम सकतीं। भाई लोग अकेले घूम कर जमीन माँगते हैं, उसका बँटवारा करते हैं। यदि बहनें इस तरह क्रान्ति में बाहर आती हैं, तो ये लोग उसे पैसों में आँकते हैं। इसका क्या उपाय है?" विनोबाजी ने विनोद में उत्तर दिया, "यह सही है कि सर्वोदय का काम राज्य के काम से आसान है। छोटी लड़कियाँ यदि दौड़ना चाहें, तो दौड़ सकती हैं, लेकिन बूढ़ी औरतें नहीं दौड़ सकतीं! इसलिए सर्वोदय छोटों के लिए आसान है, बड़ों के लिए कठिन।"

प्रश्न के दूसरे पहलू का उत्तर देते हुए विनोबाजी ने कहा, "इसका उपाय यही है कि ऐसी लड़कियाँ खड़ी होकर ऐसे सवाल पूछें, तो इन पुरुषों का मुँह बंद हो जायगा और तब ये लोग समझेंगे कि लड़कियाँ अगर बाहर काम करती हैं, तो पैसे के खयाल से भले ही वह महँगा जान पड़े, लेकिन दूरदर्शिता से यदि देखा जाय, तो वह काम बहुत सस्ता है। लेकिन ये पुरुष नजदीक की बात सोचते हैं और गलत काम कर जाते हैं!"

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ
१५ मार्च सन् १९५७

बुनीयाद बदलने वाली करुणा चाहीअे

(वीनोबा)

सच्ची क्रांतीकारक करुणा वह होगी, जो दुःख के मूल पर ही प्रहार करेगी। आजकल जो बड़ी-बड़ी लड़ाअीयां चलती हैं, अुनमें हज़ारों लोगों के हाथ-पांव-सीर आदी टूटते हैं। फीर अुनकी सेवा के लीअे डॉक्टर आदी भी भेजे जाते हैं, जो दया का काम करते हैं। लेकीन वह दया अुस लड़ाअी को रोकती नहीं है। अीधर लोग जख्मी होते चले जायं और अुधर हम अुनकी सेवा का अींतज़ाम करते चले जायं, यह बुनीयादी करुणा नहीं है। बुनीयादी करुणा तो वह होगी, जीससे लड़ाअीयां ही न होने पायं, मूल पर ही प्रहार हो। करुणा दो प्रकार से काम करती है। अेक तो अुसका साधारण दया का रूप है। आज समाज का जो तरीक़ा चल रहा है, अुसमें यह दया कोअी परीवर्तन नहीं लाती, समाज-रचना बदलने की हींमत वह नहीं करती। अुस हालत में जो दुःख पैदा होगा, अुस दुःख के नीवारण की ही कोशीश करें, तो वह सामान्य करुणा हुअी। हर जमाने में अैसी दया और सेवा करने वाले सेवक लोग रहे हैं और आज भी वे हैं। फीर भी दुःख आज कायम ही है; बल्की वह बढ़ भी गया है, क्योंकी दुःख के मूल कारण पर प्रहार नहीं हो रहा है। अगर हम चाहते हैं की दुःख का वीषवृक्ष ही न बढ़े, तो अब अुसकी शाखाओं को नहीं, जड़ को ही हमें काटना होगा।

आज सब लोग "मेरा और मेरा" करते हैं। कहते हैं, जमीन मेरी है। क्यों? तो कहते हैं की 'मेरे पास अुसके कागज हैं, दूसरा कोअी मेरे अधीकार पर आक्रमण करेगा, तो क़ानून मुझे बचायेगा।' सत्पुरुषों ने सीखाया, 'मेरे-मेरा छोड़ो' और कानून 'मेरे-मेरे' का बचाव करता है। बीलकुल अुलटी बात हो गयी। अीसमें सरकार का दोष नहीं है, लोगों का दोष है, क्योंकी लोगों की बनायी हुअी ही सरकार है। मालकीयत में से अनेक दुःख पैदा होते हैं, यह तो सरकार भी कबूल करती है और अुन दुःखों में से छूटने के लीअे सरकार और दयालु लोग कोशीश भी करते हैं, परंतु अीस तरह के प्रयत्नों से दुःख नहीं मीट सकता। अुसकी बुनीयाद ही तोड़नी होगी और वह बुनीयाद सरकार नहीं तोड़ सकेगी, लोग ही अुसको तोड़ सकते हैं। ग्रामदान द्वारा यही हो रहा है। सरकार अीस काम को रोक नहीं सकती। परंतु, सरकार यह काम कर भी नहीं सकती। समाज को बदलने का कार्य वह कर ही नहीं सकती। सोचीये तो सही की मालीक के वीचारों को बदलने का काम नौकर कर ही कैसे सकेगा? वह तो मालीक की अीच्छा के अनुसार ही सेवा करेगा। और मालीक तो जनता है। अीसी जनता की नैतीक शक्ती को ग्रामदान के द्वारा हमें जगाना है और मूल पर प्रहार करना है।

(पुडुपट्टी, मदुरा, २८-२-५७) ——

सर्वोदय की दृष्टि

स्व० बाला साहब खेर !

स्व० बाळा साहब खेर जब बंबई-राज्य के मुख्य मंत्री थे, तब की बात है:

एक रोज उन्होंने अपने कर्मचारियों को सूचना की: "आज अपने यहाँ इतने-इतने मेहमान आने वाले हैं, उनकी दावत का अच्छा इन्तजाम हो। बड़े लोग हैं वे। कोई कोर-कसर नहीं रहनी चाहिए।" मुख्य मंत्री के निवास पर ऐसे मेहमानों का तो ताँता ही लगा रहता था। कर्मचारियों में इस व्यवस्था के लिए कोई खास चिंता का फैलना जरूरी न था। फिर भी खुद बाळा साहब ने ऐसी विशेष व्यवस्था के लिए सूचना की, तो फौरन सब उसमें जुट गये और सारी व्यवस्था हो गयी।

पर अभी तक मेहमानों की गाड़ियों की कोई आहट भी नहीं सुनायी दे रही थी। भोजन का समय करीब आ रहा था, बाळा साहब तो अपने काम में ही निश्चिंत रूप से लगे हुए थे। आखिर भोजन का समय हुआ और बाळा साहब हॉल में कुर्सी पर आकर बैठ गये। कर्मचारी परेशान कि बिना मेहमानों के आये, बाळा-साहब कितनी देर भोजन-गृह में राह देखते बैठेंगे? कुछ क्षण बीते न बीते, उन्होंने सभी कर्मचारियों को बुलाने की सूचना की। लोग हैरान थे कि आज क्या खास गड़बड़ी रह गई और किस त्रुटि के लिए बाळा साहब सबको डाँट बताने वाले हैं? थोड़ी ही देर में सबके इकट्ठे होते ही उन्होंने स्मित मुद्रा से सबको उन कुर्सियों पर बैठने के लिए कहा, जिन्हें अभी-अभी आने वाले मेहमान सुशोभित करने वाले थे! कर्मचारी हिचकिचाये। इसका कुछ मतलब भी नहीं समझ सके! आखिर बाळा साहब ने आग्रहपूर्वक उन्हें बिठलाया ही। फिर कहा, "आज आने वाले मेरे मेहमान तुम्हीं लोग हो और तुम्हीं लोगों की यहाँ दावत होगी!"

इस अप्रत्याशित घटना ने कर्मचारियों के हृदय में कितनी उथल-पुथल मचा दी होगी एवं उनके अंतःकरण किस प्रकार श्रद्धा से अभिभूत हो गये होंगे, इसकी सहज कल्पना की जा सकती है! हमें तो उनके देहांत की खबर सुनते ही यह घटना यकायक याद हो आयी और "कृष्ण-कुचेलन" की घटना का भी सहसा स्मरण हो आया! अभी तो विनोबाजी ने 'सख्य-भाव' की मिसाल के लिए यह घटना प्रस्तुत की थी! नियम-पालन, अनुशासन, दफ्तरी क़ायदे-क़ानून के लिए ख्याति-प्राप्त बाळा साहब के अंतःकरण में इतना समभाव एवं आत्मीयता विद्यमान थी, यह बहुतों ने उस क्षण महसूस किया होगा!

जिसका थोड़ा भी परिचय उनसे आया हो, वह उनकी ऋजुता, शालीनता, नम्रता आदि से अभिभूत हुए बगैर नहीं रहा होगा।

अभी चंद दिन हुए, भाषा-कमीशन के अध्यक्ष के नाते आगरा में वे कमीशन के साथ आये थे। संयोग से मैं वहीं था। मैंने उनसे भेंट की, तो जैसे बरसों की आत्मीयता उभर आयी हुई पायी। भोजनोत्तर विश्रामकाल था और मंत्री हिचकिचा रहे थे—इस समय उन्हें कष्ट देने के लिए! लेकिन बिना संकोच मैं कमरे में चला गया। पहले तो आश्चर्यान्वित हुए कि मैं यहाँ कैसे? वर्धा से कब आया, इत्यादि।

फिर श्री भाई साहब के विषय में पूछा। साथ में मेरे श्वशुर प्रो० बाबूलालजी गुप्त थे। उन्होंने विनय-पूर्वक भोजन के लिए उन्हें आमंत्रित किया, तो मुझे झट कह गये: "अरे तुम्हारी ससुराल यहाँ है? पता ही नहीं था। यह आमंत्रण तो टाल ही नहीं सकते!" और 'व्याही' (समधी) के रूप में वे उस घर में सबसे ऐसे हिलमिल गये कि उनकी यह सरलता देख कर आगत सभी मेहमान तक चकित हो गये!

ऐसा हम लोगों का उनके साथ कौटुम्बिक सम्बन्ध था और इसकी विशेषता यह थी कि किसी भी पद पर वे पहुँचे, इस पर कभी उन्होंने आँच नहीं आने दी थी! अन्यथा, आज के जमाने में, अधिकार कितनी दीवारें खड़ी कर देता है, इसका अनुभव सबको है! ऐसी दीवारें तोड़ने की महानता ऐसे लोगों में ही होती है!

स्व० बाळा साहब उस पीढ़ि के अग्रणी थे, जिस पीढ़ि के एक-एक नेता धीरे-धीरे हमारे बीच से चले जा रहे हैं! जो आया है, रहने के लिए नहीं; परंतु फिर भी विषाद तो होता ही है और यह विषाद तब और तीव्र हो जाता है, जब हम देखते हैं कि उन स्थानों की पूर्ति असंभव होती जा रही है। हमारी राष्ट्रीय परंपरा में, बापू-युग ने, जितने महान् व्यक्तित्व हर क्षेत्र में प्रकाश में लाकर खड़े कर दिये, उतने शायद और कभी खड़े न हुए होंगे! रत्नों को ढूंढने वाले रत्न-पारखी की ही यह

www.vinoba.in

कीमिया होती है। वह किसी भी कोने में छिपे पड़े रत्नों को ढूँढ़ लाता है, उन्हें उजला करता है और फिर स्वयं-प्रकाशित बना कर खुला छोड़ देता है। बापू की यही सिफत थी, इसलिए हर क्षेत्र में हम ऐसे-ऐसे लोगों को पाते हैं, जिनके अभाव की कल्पना भी सहन नहीं होती!

स्व० बाळा साहब अपने अंतिम समय में, गांधी-स्मारक-निधि के अध्यक्ष की हैसियत से लोगों के संमुख फिर से एक रचनात्मक कार्यकर्ता-नेता के रूप में आये, इसलिए आज उनके भूतपूर्व राजनीतिक पद या विशेष रूप से यही कार्य लोगों को दीखता है, परंतु उनका सारा जीवन ही एक रचनात्मक कार्यकर्ता-नेता का ही जीवन था, ऐसा कहने में हमें संकोच नहीं होता। बंबई राज्य का प्रधान मंत्रित्व या भारत की हाईकमिश्नरी तो चंद अपवाद मात्र थे। उनकी मूल प्रवृत्ति रचनात्मक कार्यों के द्वारा सेवा करने की ही थी; इसलिए, इंग्लैंड से आने के बाद, अनेक पदों के लिए उन्हें कम आग्रह नहीं किया गया, परंतु उन्होंने नम्रतापूर्वक नाहीं कर दी। पदों पर भी जब तक रहे, तेजस्वी सेवक के नाते ही रहे और लोकप्रिय नेता के रूप में ही ख्याति प्राप्त की। पदों को छोड़ा, तो फिर पूर्णतया रचनात्मक काम में लग गये। आदिवासियों के क्षेत्र में तो उनकी सेवाएँ कभी भुलायी नहीं जा सकेंगी। "बालक भगवान्" के वे कितने भक्त थे, यह 'बालकनूजो बारी' के असंख्य बच्चे बता सकते हैं। कांग्रेस के स्वतंत्रता-संग्रामों में जैसे वे मोर्चे के सेनापति बने रहते थे, कांग्रेस के रचनात्मक कामों में एवं बाद में स्वतंत्र रूप से भी वे इस क्षेत्र में अग्रणी ही रहे। गांधी-निधि का काम भी उन्होंने इसी हेतु से लिया और उसके द्वारा हर तरह से रचनात्मक काम को बढ़ावा देने का एवं नयी-नयी योजनाएँ प्रस्तुत करने का अभिक्रम उन्होंने जारी रखा। भूदान-आंदोलन के साथ भी उनकी हार्दिकता इतनी अधिक थी कि अभी हमें श्री विमला बहन ने बताया कि पूना में अस्पताल में पड़े-पड़े भी "गांधी-मार्ग" के संपादक श्री जॉर्ज साहब को भेज कर "भूदान सिंपोज़ियम्" के लिए मदद करने के लिए कैसी उत्कटता के साथ उन्होंने प्रयत्न किया और कैसे उसकी योजना में वे संलग्न हुए।

यह टिप्पणी लिखते-लिखते अभी पू० दादा धर्माधिकारीजी को लिखा हुआ श्री बाळा साहब का इसी संबंध का पत्र भी प्राप्त हुआ, जिससे बाळा साहब की भूदान-संबंधी हृदयस्थ भावना एवं उत्कटता का दर्शन होता है। उन्होंने पू० दादा को लिखा है "मैं अभी विस्तरनशीन ही हूँ! आप भूदान पर कुछ अवश्य ही लिखें। एवं "गांधी-मार्ग" (पत्रिका) को सहायता करें।" पत्र ता० ५ मार्च का है। "गांधी-निधि द्वारा यह सेवा-कार्य मेरा आखिरी सेवा-कार्य है", ऐसा उन्होंने इस काम को लेते समय कहा था, ऐसा बताते हैं। ईश्वर ने उनकी यह इच्छा पूरी कर दी!

अत्यन्त उज्ज्वल, पवित्र, सेवाभावी, त्यागी एवं तेजस्वी कर्मयोगी का जीवन बिता कर, सेवा-तृप्ति के साथ, वे जीवन की संध्या-वेला में शांतचित्त से प्रभु-शरण हुए। ऐसी मृत्यु भाग्य से ही प्राप्त होती! हम सबका उनकी स्मृति में श्रद्धांजलि है!

काशी, १०।३।५७ —लक्ष्मीनारायण भारतीय

कार्यकर्ता की कसौटी

जिला-सेवकों के बारे में लोगों के मन में कुछ भ्रम रह गया है। जिले का वह एक सेवक होता है। उसका वह जिला नहीं बनता। एक-एक जिले के अनेक सेवक भी बन सकते हैं। उन अनेक सेवकों में से किसी एक को निवेदक के तौर पर गिन सकते हैं।

निधि-मुक्ति से कोई तकलीफ होने वाली ही नहीं थी। उस विषय में मैं पूरा निश्चिंत था। अब तो सब दूर वैसा अनुभव ही आ रहा है।

चुनाव का आकर्षण जिनको मालूम होता है, वे लोकनीति के विचार को समझे ही नहीं हैं। इन दिनों मैं वेदाध्ययन करता हूँ, तो कभी-कभी बीच में कोई मक्खी शरीर पर बैठ जाती है। उससे मेरा अध्ययन रुकता नहीं। चुनावों को मैं उस मक्खी की उपमा देता हूँ। जो अध्ययन की गहराई में पहुँचता है, उसको उस मक्खी का भान भी नहीं होगा।

छोटी-छोटी बातों में कार्यकर्ताओं को मैं हिदायत नहीं देना चाहता। मैं चाहता हूँ कि उनकी पूरी शक्ति खिले। मेरी तरफ से उनको एक ही हिदायत, नम्रता हो, निरहंकारता हो, सबके लिए आदर हो, दबाव से कोई कार्य न हो।

१८ अप्रैल के दिन बिहार भर का भूमि-वितरण समाप्त करना है। इसमें सबका योग चाहिए।* —विनोबा

*श्री पारस बाबू के नाम आये हुए एक पत्र से।

बिहार को सन् '५७ की भूक्रांति का आवाहन!

पिछले ५-६ साल से जहाँ-जहाँ और जब-जब जनता के पास भूदान का संदेश पहुँचा है, जनता ने इसका स्वागत ही किया है। आज आंदोलन ग्रामदान-तालुकादान प्राप्त करने और ग्रामराज कायम करने तक पहुँच रहा है। अतः हमारा धर्म हो गया है कि हम सब इस पावन आंदोलन में भाग लेकर अपना हविर्भाग अर्पित कर इसे सफल करें।

बिहार के लिए अब भू-क्रांति का कार्य बहुत आसान हो गया है, क्योंकि स्वयं विनोबाजी ने २७ महीने यहाँ रह कर क्रांति का दर्शन करा दिया है। परंतु अभी बहुत कम भूमि बँट पायी है एवं करीब २० लाख एकड़ भूमि का वितरण अभी बाकी है। अतः सन् '५७ के प्रथम चरण के स्वरूप हमें १८ अप्रैल तक सारी जमीन बाँटने का उपक्रम कर डालना है। बाद के समय में गाँव-गाँव से भूमिहीनता ही मिटा देने की दृष्टि से कार्य होगा। यह महान् कार्य थोड़े से भूदान-कार्यकर्ताओं का ही नहीं है, बल्कि समूचे राष्ट्र का है। हर एक व्यक्ति इस मानवीय क्रांति का कार्यकर्ता है।

बिहार के हर एक नागरिक तथा ग्रामीण से हम यह अपील करते हैं कि सन् सत्तावन के कार्य की पहली किस्त के तौर पर २० लाख एकड़ जमीन का, जो जिलों में मिली है, बँटवारा शीघ्र कर दें। यदि प्रत्येक गाँव के लोग तैयार हो जायँ, तो एक ही दिन में सारे प्रांत की भूमि का बँटवारा हो सकता है। फिर भी १८ अप्रैल के ऐतिहासिक दिन तक बँटवारे की अवधि रखी गयी है। सारी जमीन पहले बाँट कर, १८ अप्रैल को भूक्रांति का समारोह गाँव-गाँव में मनाने का कार्यक्रम चलना चाहिए एवं साल के अगले महीनों में भूमिहीनता मिटाने का संकल्प करना चाहिए। वितरण के कागजात भूदान-कमेटी से प्राप्त होंगे।

जहाँ हमने बिहारवासियों से भूक्रांति में हिस्सा लेने की अपील की, वहीं कुछ खास लोगों पर विशेष जिम्मेदारी भी डालना चाहते हैं: (१) भूदाताओं से अपील है कि अपनी जमीन का विवरण शीघ्र देकर नियमानुसार भूमि वितरित करा देने में मदद करें। (२) ग्राम-पंचायतें तथा ग्राम-मुखिया हर गाँव में हैं। उनका पुनीत कर्तव्य यह है कि अपने गाँव में प्राप्त जमीन का वितरण करा दें। (३) हमारी बहुत बड़ी आशा रचनात्मक संस्थाओं से है। यह काम उन्हींका है, अतः अपने काम को चंद दिनों के लिए रोक कर भी उन्हें भूक्रांति को सफल करना चाहिए। (४) राजनैतिक पक्षों का बहुत सहयोग बिहार में मिला है। आशा है, चुनाव के बाद सारे पक्ष अपनी पूरी शक्ति इस कार्य में लगायेंगे और इस अहिंसक क्रांति को सफल कर विश्व-शांति की पक्की और ठोस बुनियाद डालेंगे। (५) राष्ट्रनिर्माता शिक्षकों से बहुत अधिक अपेक्षाएँ हैं—अपने गाँव के आस-पास के २-३ गाँवों की जिम्मेदारी प्रत्येक शिक्षक को लेनी चाहिए और विवरण प्राप्त कर वितरण करना चाहिए। ३ दिन का समय लगेगा, लेकिन राष्ट्र का एक महान् कार्य होगा। आशा है, शिक्षकों का पूरा सहयोग मिलेगा।

अंत में हम बिहार के विद्यार्थियों से खास अपील करना चाहते हैं कि इस कार्य में वे भी अपनी पूरी शक्ति लगावें। हर देश के जीवन में ऐसी घड़ियाँ आती हैं, जब नवयुवकों के बलिदान की आवश्यकता होती है। आज ऐसी ही एक घड़ी हमारे देश के लिए आ पहुँची है। हमें आशा है, कोई इस अवसर पर पीछे नहीं रहेगा।

१८ अप्रैल के भूमिक्रांति-दिवस का कार्यक्रम इस प्रकार हो:

(१) सुबह: प्रभातफेरी—५ से ६ बजे तक, (२) सामूहिक सफाई—६॥ से ८॥, (३) (क) सायंकालीन सार्वजनिक सभा की सूचना तथा सन् '५७ के आह्वान, कार्यकर्ताओं से निवेदन तथा दाताओं से अपील का जगह-जगह वाचन ९ से १०, (४) (क) भूमिहीनता मिटाने के लिए भूमि माँगना, प्राप्त भूमि का विवरण प्राप्त करना, भूदान-पत्रिका के ग्राहक बनाना तथा साहित्य-बिक्री करना २ से ४; (५) सांयकालीन सार्वजनिक कार्यक्रम, भूमि-वितरण का आयोजन, सार्वजनिक सभा, भूमिहीनता मिटाने, साधनदान आदि के संबंध में सामुदायिक ग्राम-संकल्प—४—६॥; (६) प्रार्थना ६॥—७ तक हो।

हम हैं आपके विनीत

जयप्रकाश नारायण,	अनुग्रहनारायण सिंह,	गौरीशंकर शरण सिंह,
कृष्ण वल्लभ सहाय,	वैद्यनाथप्रसाद चौधरी,	लक्ष्मीनारायण (लक्ष्मीबाबू)
रामदेव ठाकुर,	ध्वजाप्रसाद साहू,	ब्रज किशोर प्रसाद साहू
ब्रजविहारी प्रसाद,	नंदकुमार सिंह,	गंगाशरण सिंह

www.vinoba.in

जीवन-बीमे का नवसंस्करण

सामाजिक सुरक्षा और संपत्तिदान

(मनमोहन चौधुरी)

महात्माजी ने अपनी कच्ची उम्र में एक दफा जीवन-बीमा कराया था। बाद में उनके मन में यह विचार आया कि इससे मैं ईश्वर पर की श्रद्धा ही खो रहा हूँ! जो ईश्वर सारे संसार को पालता है, क्या वह मेरे परिवार को भी नहीं पालेगा? फिर इस तरह संचय करने से मैं अपने बच्चों को स्वाश्रयी बनाने वाली शक्ति पर ही क्या प्रहार नहीं करूँगा? सब सोच कर ही गांधीजी ने अपनी बीमा-पॉलीसी रद्द करा दी!

संचय की वृत्ति ही शोषण का एक बड़ा कारण है। हम संचय भविष्य के लिए करना चाहते हैं, ताकि हम आलसी बन कर जी सकें तथा हमारे मृत्यु के बाद हमारे बाल-बच्चे भी मेहनत न करके जीयें। इसके लिए फिर हम दूसरों की मेहनत की चोरी करने के तरीके नये-नये ढंग से सोच निकालते हैं।

परंतु सृष्टि की योजना में नित्य नये उत्पादन की व्यवस्था की गयी है। हर मौसम में फल पकते हैं, अनाज पकता है। मनुष्य हर सवेरे मेहनत करने की नयी शक्ति, नया जोश लेकर जाग उठता है। इस शक्ति, इस जोश को अगर वह काम में नहीं लायेगा, तो उसके शरीर, बुद्धि तथा आत्मा का विकास ही रुक जायेगा।

जब देश की समृद्धि की योजना बनायी जाती है, तो इसी प्राकृतिक योजना की बुनियाद पर वह बनती है। हर साल करोड़ों एकड़ जमीन की खेती होगी, हर रोज करोड़ों आदमी खेतों में, मिलों में, दूकानों-बाजारों में काम करेंगे, इसी विचार से वह योजना बनती है। पचीस साल मेहनत करें और बाद में पचीस साल सारे देश के लोग आराम से बैठे-बैठे भोग भोगें, ऐसी योजना किसी भी राष्ट्र में नहीं बनायी जाती। मगर व्यक्ति ऐसा जरूर चाहता है! इसका यही कारण है कि प्रकृति की योजना के बारे में वह अज्ञानी है तथा मनुष्य पर उसकी श्रद्धा नहीं है। परस्पर-सहयोग के लिए ही मनुष्य ने समाज बनाया है, परन्तु उसके मन में अब तक यह बोध दृढ़ नहीं हुआ है कि इस सहयोग के बिना समाज या व्यक्ति, किसी का भी एक क्षण भी काम नहीं चलेगा! इसलिए हर व्यक्ति यही सोचता है कि मैं खुद ही अपना रक्षणकर्ता हूँ। मैं तो अपना रास्ता निकालूँगा, भले ही औरों का कुछ भी हो! व्यक्ति की श्रद्धा की यह जो कमी है, वह सामूहिक जिम्मेदारी की भावना को कमजोर बना देती है, फलतः व्यक्ति की अश्रद्धा भी बढ़ती जाती है। नतीजा हम यही देखते हैं कि दुनिया में स्वार्थों की कश-मकश, तीव्र प्रतियोगिता आदि ही समाज का मुख्य तत्त्वज्ञान बन गया है, जिसके नतीजों के रूप में विषमता, दुःख तथा विश्वव्यापी संघर्ष दिखायी दे रहे हैं। इसलिए आज सब कोई इस तरह का समाज बनाना चाहते हैं, जिसमें द्वन्द्व की जगह सहयोग, खुदगर्जी की जगह करुणा तथा विषमता की जगह समता की स्थापना हो।

इस तरह के आदर्श समाज में व्यक्तिगत संचयों का कोई स्थान या अर्थ नहीं होगा। एक ही कुटुम्ब के अन्दर जो पाँच-दस व्यक्ति रहते हैं, वे अपना अलग-अलग नहीं सोचते। न यह देखते हैं कि कुटुम्ब के संचय में किसका कितना हिस्सा है और उस अनुपात में किसकी कितनी हिफाजत हो! उसी तरह आदर्श समाज में भी इस तरह की व्यवस्था होनी चाहिए, जिसमें किसी भी व्यक्ति पर संकट आने पर उसको आवश्यक सहायता मिल सके। सारे समाज की दृष्टि से अगर हम सोचेंगे, तो समाज जो कुछ 'संचय' करेगा, उसे पैसे के रूप में सुरक्षित रखने का कोई अर्थ ही नहीं है, यही हम पायेंगे। रिजर्व-बैंक में तो अरबों रुपये जमा हों, लेकिन देश में अनाज की दस लाख टन की कमी हो और उधर जागतिक युद्ध की वजह से आमदरफ्त भी बन्द हो जाय, तो उन अरबों रुपयों से किसी का पेट नहीं भरेगा! इसलिए देश या दुनिया का 'संचय' अनाज, दवा आदि उपयोगी चीजें, सेवा के साधन तथा नागरिकों की विशिष्ट कार्यक्षमताओं के रूप में ही होगा। हर व्यक्ति प्रामाणिकता के साथ समाज की सेवा करेगा तथा जरूरत पड़ने पर इस 'संचय' तथा सेवाओं से अपना हिस्सा ले लेगा। इस साधन-संपत्ति तथा सेवाओं का एक हिस्सा खरीदने के लिए ही तो आखिर यह व्यक्तिगत संचय किया जाता है! देश में अगर साधन-संपत्ति तथा सेवाएँ ही न मिलती होतीं, तो इस व्यक्तिगत संचय की भी कीई कीमत नहीं रहती। अतः इस साधन-संपत्ति तथा सेवाओं में हाथ बँटाने का अधिकार अगर समाज कबूल करेगा, तो उसे 'खरीदने' के लिए व्यक्तिगत संचय या परिग्रह की जरूरत ही नहीं रहेगी।

अर्वाचीन पूँजीवाद के पहले, कम-से-कम हिन्दुस्तान में, जो ग्राम-समाज था, उसमें इस तरह की परस्पर-सहयोगिता, एक-दूसरे के प्रति जिम्मेवारी की भावना तथा प्रेम का सामान्य आदान-प्रदान होता रहता था; लेकिन व्यापार के सिद्धान्त पर चलने वाली जीवन-बीमा की कल्पना में निहित व्यवस्था मनुष्य के इन सारे गुणों को तुच्छ करके निरी आत्म-केन्द्रियता के आधार पर खड़ी हुई है। परिणामस्वरूप समाज की सत्यवृत्ति पर भरोसा रखना तथा इन गुणों को संगठित रूप देना न सीख कर अपनी स्वार्थ-बुद्धि पर तथा स्वार्थ-बुद्धि के द्वारा परिचालित व्यापारी-संस्था पर भरोसा रखने के लिए मनुष्य प्रेरित होता है। इसके फलस्वरूप समाज में सहयोगिता तथा मानवीय प्रेम, सहानुभूति आदि गुणों के विकास में सिर्फ बाधा ही नहीं पहुँच रही है, बल्कि इन गुणों की प्रत्यक्ष अवनति हो रही है।

आज पश्चिम के देशों में परिकल्पित जन-कल्याण राष्ट्र (वेलफेअर स्टेट) का यह ध्येय है कि जन्म से लेकर मृत्यु तक, हर स्थिति में राज्य व्यक्ति का सहायक हो। इसी उद्देश्य से उन राष्ट्रों में सरकार की ओर से जीवन-बीमा, स्वास्थ्य-बीमा, बेकारी-बीमा, आकस्मिक विपत्ति का बीमा आदि तरह-तरह के बीमों का इन्तजाम हो रहा है। इससे व्यक्ति को सुरक्षा तो मिलती है, मगर वह सुरक्षा उसे अपने आसपास के पड़ोसी या मित्रों से नहीं मिलती, एक निर्गुण यंत्र से मिलती है। उसकी विपत्ति का कागज-कलम से हिसाब लगा कर उसी हिसाब से वह यंत्र उसे मदद देता है। लेकिन उस यंत्र के अन्दर उसकी विपत्ति के लिए मानवीय सहानुभूति का स्पर्श कहीं भी नहीं होता। आधुनिक पूँजीवाद ने मनुष्य को परस्पर सम्बन्धरहित, विवेकहीन, मानवता के धूलिकण में परिणत करने की जो प्रक्रिया शुरू की है, जनकल्याण राष्ट्र की योजना उस प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में ही मदद करती है।

अतः इस जीवन-बीमा रूपी व्यापार का सिर्फ राष्ट्रीयकरण हो जाने से समाज-वाद या सर्वोदय नहीं होगा। हमारे देश के सात करोड़ परिवारों की सुरक्षा की व्यवस्था जिस तरह से की जायेगी, उसी पर सभी चीजों का दारोमदार है। विनाश के बजाय अगर मानवता का विकास करना हो, तो इस व्यवस्था को विकेन्द्रित करके छोटी-छोटी इकाइयाँ बनानी होंगी। इसकी यह व्यापारी सूरत बदलनी होगी।

इस दृष्टि से हिन्दुस्तान के गाँवों के लिए संपत्तिदान-यज्ञ की योजना के जरिये सामुदायिक सुरक्षा की कल्पना सोचने लायक है। इसमें हर व्यक्ति अपनी आमदनी का जो एक हिस्सा ग्राम-समाज को देगा, वह गाँवों के उन्नयन के कामों में लगाया जायगा एवं उसमें एक हिस्सा बीमारी, मृत्यु या आकस्मिक विपत्ति आदि के अवसर पर मदद पहुँचाने में खर्च होगा। व्यापारी जीवन-बीमों में अगर एक आदमी पचीस साल तक प्रीमियम देने के बाद भी जिन्दा रहे, उसके लड़कों को ऊँची-ऊँची नौकरी मिले, लड़कियों की भी अच्छे-अच्छे घरानों में शादी हो चुकी हो, तो भी उस पॉलीसी के अनुसार बीमों की रकम उसे मिलेगी। लेकिन संपत्तिदान की योजना में वैसा नहीं है। इसमें जिसकी जितनी आवश्यकता होगी, उसे उतनी ही मदद मिलेगी। 'कितने दिन तक प्रीमियम दिया है,' इस बात के साथ जिस तरह जीवन-बीमों के आखिरी नतीजे का कोई संबंध नहीं है, उसी तरह 'किसने कितना हिस्सा दिया है', इसके साथ भी इसका कोई संबन्ध नहीं होगा। खुद के लिए प्राप्त करने के मतलब से यह नहीं दिया जायेगा, बल्कि हममें से जो दुःखी बनेगा, उसे देने के लिए यह दान दिया जायगा। जब मैं दुःखी बनूँगा, तब मुझे भी दूसरों की तरह यह मदद मिलेगी। एक-दूसरे को पहचानने वाले, एक-साथ मिल-जुल कर काम करने वाले तथा एकसाथ जीने वालों का समाज ही इस निधि का स्रष्टा तथा परिचालक बनेगा। इसलिए पारस्परिक प्रेम तथा सहानुभूति इस व्यवस्था का आधार होगा तथा इन गुणों का पूर्ण विकास करने का मौका इसमें मिलेगा। हर गाँव में जब यह व्यवस्था चलेगी, तो फिर दस-बीस गाँवों में, एक-एक क्षेत्र में तथा सारे राष्ट्रों में भी इस तरह का संगठन किया जा सकेगा, जिससे राष्ट्र के किसी भी गाँव, थाना, जिला या प्रान्त पर विपत्ति आने पर उसे मदद पहुँचाने के लिए सारे राष्ट्र की शक्ति तथा साधन-संपत्ति फौरन संगठित हो सके। शहरों के लिए भी इस तरह की योजना बनाना मुश्किल नहीं होगा। लेकिन इसके लिए शहर की समाज-व्यवस्था में भी काफी हेरफेर करना होगा। जो लोग समाजवादी व्यवस्था की स्थापना चाहते हैं, उन्हें इस दिशा में चिन्तन करना चाहिए तथा इसका कोई रास्ता निकालना चाहिए। सर्वोदय के साथ समाजवाद का जो भी भेद हो, मानवीय गुणविकास की आवश्यकता के बारे में दोनों की राय एक है।

इस प्रकार का गुण-विकास जिस समाज का आधार नहीं है, उसका बाहरी स्वरूप समाजवाद की तरह भले ही दिखायी दे, लेकिन वास्तव में वह सरकारी पूंजीवाद के सिवा और कुछ नहीं है।

(मूल उड़िया; 'ग्रामसेवक' से)

---

www.vinoba.in

समता और ममता !

(नेमिशरण मित्तल)

मानव-समाज भौतिक पदार्थ नहीं है। उसमें मानवता-रूपी आध्यात्मिक संस्कार का सर्वोपरि महत्त्व है। प्रश्न यह है कि हम मानव-समाज के साथ किस प्रकार सम्बन्धित होते हैं ? मानवीय सम्बन्ध स्नेह-सम्बन्ध या विचार-सम्बन्ध है। वह देह-सम्बन्ध या शक्ति-सम्बन्ध नहीं है। स्नेह का सूत्र जब परिवार के संकीर्ण क्षेत्र में प्रयोग होता है, तो उससे ममता का निर्माण होता है तथा विस्तृत सामाजिक क्षेत्र में वही समता को जन्म देता है।

समता का अर्थ है–'सब पर ममता' या 'सब पर समान ममता।' इस प्रकार यदि हम अपनी ममता को नष्ट करके हृदय-शून्य बनने के बजाय उसका विस्तार कर दें, तो उससे समता का निर्माण होगा। पाश्चात्य देशों में समता के भीतर ममता का आध्यात्मिक या मानसिक तत्त्व नहीं है। वहाँ समता का अर्थ भौतिक समानता या पदार्थगत समता है। ममता का अर्थ है–'ममत्व की प्रतीती।' ममत्व, अर्थात् जो मैं हूँ, वही यह है, याने आत्मीय भाव। ममत्व तो वस्तुतः 'अहं ब्रह्मास्मि तत्त्वमसि' की निष्ठा है। जब यह निष्ठा समाजगत होती है, संपूर्ण समाज में परिव्याप्त हो जाती है, तब समता या समत्व-भाव की स्थिति उत्पन्न होती है। यह समत्व पदार्थगत न होकर मनोगत, बुद्धिगत एवं आत्मगत तत्व है।

विस्तार की शक्ति

ममता में लचीलापन (फ्लैक्सेबिलिटी) होती है, अर्थात् उसमें विस्तार की शक्ति है। घर में दूसरे परिवार से एक लड़की बहू बन कर आती है, उस पर सबकी ममता हो जाती है अर्थात् वह ममत्व-क्षेत्र में दाखिल कर ली जाती है। आज दो बच्चे हैं, कल तीसरा आता है, वह भी ममत्व-क्षेत्र में समा जाता है। इसी प्रकार ममत्व का विस्तार होता रहता है। यह क्षेत्र संकुचित भी हो सकता है। हमें सतर्कता बरतनी है कि हमारी ममता का क्षेत्र घटे नहीं, बढ़ता ही जाये। यह निरन्तर स्वरूप-चिन्तन तथा आत्मानुभूति से ही सम्भव है।

दरिद्रनारायण का प्रवेश

हमें अपनी ममता के क्षेत्र में दरिद्रनारायण को दाखिल कर लेना चाहिए। भाव जब अभाव की ओर बढ़ता है, तभी समता का जन्म होता है। ठीक इसी प्रकार जब लक्ष्मी के उपासक अपनी श्री-समृद्धि में दरिद्रनारायण को बराबर का हकदार मान कर दाखिल करते हैं तथा उनकी दरिद्रता में अपना हिस्सा स्वेच्छा से बँटा लेते, हैं तभी समत्व-भाव का उदय होगा। साम्ययोग की साधना इसी अर्थ में साम्यवादी प्रक्रिया से भिन्न है। साम्ययोग में मूलतः योग अर्थात् जोड़ की साधना है। हम अपनी ममता के दावेदारों और हिस्सादारों में जब समाज के दीन-हीन उपेक्षित मानव को समानता के स्तर पर जोड़ लेते हैं या सम्मिलित कर लेते हैं, तो साम्ययोग की सिद्धि होती है। हम इस योग-संयोग के लिए समृद्धि बढ़ने की राह नहीं देखते रहेंगे, वरन् तुरन्त उन्हें अपनी वर्तमान स्थिति का ही भागीदार बना कर परस्पर भाव-अभाव के संयुक्त साझीदार बनेंगे। साम्यवाद में योग की कल्पना ही नहीं है, वहाँ तो वियोग या वादविवाद और प्रतिवाद का क्रम चालू होता है। योग में सशक्त और अशक्त का संयोग और साझा है। बाद में सशक्त की जय (सरवाइवल ऑफ़ दि फ़िटेस्ट) का जंगली नियम (ब्रूट लॉ) लागू होता है। योग में ममत्व का क्षेत्र विस्तीर्ण होता है। बाद में वह संकुचित ही रहता है, उसमें ममताएँ टकराती हैं, उनका अन्त होता है और ममत्व-शून्य अर्थात् आध्यात्मिक समत्व से रहित पदार्थगत-समता का निर्माण होता है। इस समता की रक्षा मनुष्य के भीतर पैदा होने वाली ममता को शस्त्र से कुचल कर की जाती है।

साम्ययोग में ममता का उन्मूलन या दमन आवश्यक नहीं है, उसका विस्तार अभीष्ट है। ये दोनों बहनें हैं। ममता छोटी बहन है और समता बड़ी बहन। दोनों ही स्नेह-सद्भाव-प्रसूत हैं।

व्यक्ति और समाज में सामंजस्य

ममता व्यक्तिगत है और समता समाजगत। व्यक्ति और समाज में वैर या हित-विरोध नहीं है, वरन् वे एक ही हैं। व्यक्तित्व का विस्तार ही समाज है। व्यक्ति और समाज में हितैक्य या हित-साम्य है। वहाँ संघर्ष की कोई गुंजाइश ही नहीं है। जब इस तत्त्व की प्रतीती होती है, तभी ममता व्यक्तिगत क्षेत्र को लाँघ कर अथवा उसका अतिक्रमण करके सामाजिक क्षेत्र में विस्तीर्ण होती है। इसी समाजगत ममता का नाम समता है। यह आवश्यक नहीं है, इतना ही नहीं, वाँछनीय भी नहीं है कि वैयक्तिक दायित्वों की पूर्ति की ही न जा सके। समाज के प्रति समत्व-भाव रख कर जब हम अपनी व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक जिम्मेवारियों को निभाने में अपने ऊपर समाज-हित का अंकुश रखते हैं, तभी हमारे मानव-स्वभाव का उत्कर्ष होता है। स्वभाव का अर्थ है—स्व + भाव = आत्मा का भाव। अपनी व्यक्तिगत जिम्मेवारी को पूरा करने के लिए हम दूसरों की स्वतंत्रता और उनके अधिकार में बाधा नहीं डालते तथा उनका अधिकार अपने समान मानते हैं, तभी हमारा साम्ययोग का संकल्प सिद्ध होता है।

नन्हें-मुन्नों के रोटी के टुकड़े !

(देवतादीन मिश्र)

सूर्यास्त होते-होते गाँव में पहुँचा। गाँव का नाम नहवाई, तहसील मेजा, जिला इलाहाबाद। गाँव के पश्चिमी किनारे से ज्यों ही प्रवेश किया, तो कुछ बच्चे गोली खेलते और नारा लगा रहे थे। "एक-दो, लाल टोपी फेंक दो।" "हमारा वोट कहाँ गिरेगा, दो बैलों की जोड़ी में।" तुरंत कुछ बच्चों को यह कहते सुना—"वोट दो झोपड़िया में—नहीं तो जाओगे गढ़ैया में।" मुझे देख कर बच्चों ने जोर का हल्ला मचाना शुरू कर दिया। नजदीक के घरवाले भौंचक्का हो उठे। कोई कहने लगा–क्या बेचते हो ? बालकों के बीच मैंने खड़े होकर कहा—"हाँ भाई ! अब काम की बात तुमने पूछी है। मैं धरती-माता की चिट्ठी लेकर आया हूँ। उनके गीत गाता हूँ। उनकी किताबें बेचता हूँ।"

बच्चों ने गोली खेलना बन्द कर दिया। मुझे चारों ओर से घेर लिया। कोई मेरा गेरू का डिब्बा छीनने लगा, कोई झोला। कोई किताबें खींचने लगा। मैंने 'धरती के गीत' की किताबें पाँच बच्चों में बाँट दीं। वे पाँच जगह बैठ कर गीत पढ़ने लगे। कुछ बच्चे बाकी बचे। उनसे कहा—"आओ, तुम्हें भगवान् का संदेश सुनायें।" बच्चे पीछे हो लिये। एक दीवाल पर मैं नारा लिखने लगा, बच्चे दुहराते गये :

"सन् सत्तावन रहा पुकार, पूरा गाँव बने परिवार।
मिल कर रहना करना प्यार, बाँट कर खाना धर्म हमार॥

चन्द मिनटों के बाद मैंने बच्चों से कहा, "भाई ! आज आपके गाँव में मैं रहना चाहता हूँ—मुझे बताओ कहाँ रहूँ ? मैं चाहता हूँ कि विनोबा की चिट्ठी ठीक से पूरे गाँव को सुना सकूँ और फिर तुमसे भी मैं कुछ बातें करना चाहता हूँ। बताओ, कहाँ रुकूँ ?"

कोई कहता कि गाँव के मुखिया के यहाँ रुकिये। कोई कहता, सभापति के यहाँ रुकिये। तरह-तरह के बहाने करने लगे। फिर सबने कहा—"आप यहाँ से दूसरे गाँव में चले जाइये। संत की चिट्ठी वहीं सुनाइयेगा।" मैंने कहा—"भाई, आज तो इसी गाँव में मुझे रात काटनी है। पैर पसारने को चार हाथ धरती कहीं भी मिल ही सकती है !"

एक बालक दस साल का था। बोल उठा—"भइया, आप 'फकीरे' के यहाँ चले जाइये। वहाँ कोई नहीं रहता। बिलकुल खाली चौपार है। आराम से वहाँ सोइयेगा।" सभी ने जोरों से इसका समर्थन किया।

मैंने बच्चों से कहा—"मैं फकीरे की चौपार में अकेले सोने नहीं आया—मैं तो समूचे गाँव में विनोबा बाबा का संदेशा पहुँचाने आया हूँ। अकेले चौपार में क्या करूँगा ? तुम लोग बहाना क्यों बना रहे हो ?" बच्चे न मुझे आगे जाने देते थे, न पीछे लौटने देते थे। मेरा सभी सामान छीना-झपटी में लथेड़ रहे थे। इतने में मैं बोला—"तुम बच्चों के लिए भी एक चिट्ठी लाया हूँ। बताओ, उसे कहाँ सुनोगे ?"

जिज्ञासु बालक चिल्ला उठे—"हमारी चिट्ठी यहीं बैठ कर सुनाइये।" झट बच्चों ने चारपाई बिछा दी। मेरा बिस्तर उन्होंने उठा कर सम्हाल कर रख दिया। नाच-नाच कर चिट्ठी सुनने के लिए उतावले हो गये। मैंने गाँव के अन्य बच्चों को बुलाने के लिए कहा। तुरंत ही बालक दौड़ पड़े और बात की बात में पचीस लड़कों का समूह मेरी चारों ओर जमा हो गया। "चिट्ठी सुनाइये–चिट्ठी निकालिये" की गूँज मच गयी…।

फकीरे के यहाँ मैं नहीं गया। जहाँ खड़ा था, वहीं बैठ गया। बालक रामरुच का दालान था। आसपास पत्थर बिखरे पड़े थे। एक पत्थर पर बिस्तर खोल कर

www.vinoba.in

मैंने चरखा निकाला। चरखे की पेटी देख कर बच्चे विस्मित हुए। कहने लगे—"मुसाफिर! ग्रामोफोन भी लाये हो क्या?" चरखा खुलते ही बड़े चक्र को देख कर एक-साथ चिल्ला पड़े—"मुसाफिर, जरा अच्छा रेकार्ड सुनाओ।"

मैंने चरखा कातना शुरू कर दिया। सभी अकबका उठे। खोद-खाद मचानी शुरू कर दी—"यह क्या है?" बच्चों को चारों ओर गोलाकार में बिठाया और मैंने प्रश्न पूछना शुरू किया—

"भाई बताओ, इन्सान को जीने के लिए सबसे जरूरी चीज क्या है?"

सबने कहा—"भोजन।"

"बहुत ठीक। अब दूसरी चीज क्या जरूरी है?"

"...पहनने के लिए कपड़ा।"

"और तीसरी जरूरत...?"

बच्चे घबड़ाये और एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे।

मैंने कहा—"रहने के लिए मकान चाहिए न!"

सभी "हाँ-हाँ" कह कर हँस पड़े।

फिर मैं बोला—"देखो भाई, यह बताओ कि खाना कहाँ से आता है?

"खेत से...।"

"और-मकान...?"

"मिट्टा से बनाय लेत हैं।"

"अब बताओ कि कपड़ा कहाँ पैदा होता है? गाँव में होता है क्या?"

"नहीं मिल से। फिर बाजार में बनिये के यहाँ से मोल आता है।"

"अच्छा बताओ—खाना ज्यादा जरूरी है कि कपड़ा?" बच्चों ने कहा—"खाना।" "खाना? देखो बच्चो! तुम बिना खाये स्कूल जा सकते हो। पर देखें कौन बहादुर लड़का है, जो अभी पाँच मिनिट यहाँ नंगा घूम सकता है?"

सभी चुप।

"तो पहली जरूरत क्या?"

"कपड़ा"

"दूसरी..?"

"खाना"

"तीसरी?"

"घर"

"ठीक बात। अब ये तीनों चीजें गाँव में घर-घर पैदा होने लगेंगी, तो तुम्हारा गाँव सुखी बनेगा न?"

"हाँ जी।"

"इस चरखे से वही कपड़ा बनता है। इससे तुम भी कात सकते हो।"... मैं थोड़ी देर चुप रहा। जिज्ञासु बच्चों ने कहा—

"भाईजी! और कुछ बताइये।"

"मैंने उन्हें एक गीत गवाया। बच्चे नाच नाच कर गाने लगे—जोरों का हल्ला हुआ।

इतने में एक बुढ़िया घर से चनचनाती हुई निकली। डाँट कर कहने लगी—"अरे भाई, तुम यहाँ क्यों बैठे हो? क्या शोरगुल मचा रहे हो। जल्दी यहाँ से अपना बोरिया-बिस्तर दूसरी जगह ले जाओ। यहाँ न रहने की जगह है, न खाना मिलेगा। बेकार क्यों बच्चों से हल्ला करा रहे हो।"

बच्चों ने कहा—"भाईजी आप बुरा न मानें। यह बुढ़िया सठिया गयी है। आइये—चलिये फकीरे के यहाँ रहें। वहाँ खूब गाना गायेंगे।"

बच्चे झोला, चरखा, बिस्तर लेकर चल दिये। पीछे-पीछे मैं भी चल पड़ा। आये फकीरेजी के घर। गाँव के तालाब के किनारे पर यह घर है। स्थान बहुत अच्छा। एकान्त। सभी सामान एक चारपायी पर रख कर बच्चे कहने लगे—"एक गीत गवाइये भाईजी!"

"भूमिदान-यज्ञ हम सफल बनायेंगे" का गीत गवाया। बच्चे उछल पड़े। बच्चों का गीत सुन कर फकीरेजी दौड़े-दौड़े आये। मुझे बैठा देख कर कहने लगे—"भाई, आप कृपा करके यहाँ से चले जाइये। यहाँ बच्चों का ऊधम ठीक नहीं है! न आपकी बात ही यहाँ कोई सुनने आयेगा। आप मुखियाजी या पहलवान के घर चले जाइये।"

मैंने उनसे रात भर वहाँ रहने देने की विनय की। वह राजी हो गये और बोले—"अच्छा अभी तो चले जाइये। लोगों से मिल लीजिये, सोने के लिए रात में आ जाइयेगा।"

शाम के सात बजे। सारे दिन खाना नहीं खाया था। भूख महसूस हो रही थी। पर बाल-गोपालों की मंडली बार-बार यही कहती थी—"दूसरा गाना गवाइए, भाईजी।"

मैंने कहा—"मुझे खाना भी खिलाओगे कि नहीं?"

सभी बोले—"जी हाँ।"

"अच्छा तो कौन-कौन लोग अपने घर से एक एक रोटी ला सकते हैं?"

सात बच्चों ने हाथ उठाये।

"तुम लोग एक-एक रोटी और बन पड़े, तो नमक मेरे लिए यहीं ले आना। प्रेम से खाया जायगा और गीत गाया जायगा।"

एक ने कहा—"और अचार भी ले आयें?"

मैंने कहा—"माँ मारेगी तो...? केवल रोटी लाना।" बच्चे रोटी लाने के लिए खेलते-कूदते अपने घरों को चल पड़े।

तीन बच्चे—जिनकी उम्र १२-१३ साल की थी, मेरे पास बैठे रहे। ये आठवीं और नवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। इनमें से एक ने, नाम था कन्हैयालाल, मुझे वहाँ चलने के लिए कहा; जहाँ गाँव के लोग कौड़ा (अगीठी) के पास बैठते हैं और गप-शप करते हैं। गाँव में गया। एक कौड़ा के पास आठ-दस आदमी चुनाव की चर्चा में एक दूसरे से बहस कर रहे थे। बच्चों ने दूर से ही वह स्थान मुझे दिखा दिया। मैं अकेला उस तरफ बढ़ा।

यह घर श्री पुरुषोत्तम 'पहलवान' का था। गाँव के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। मैं जाकर बैठ गया। उन लोगों की बातचीत चलती रही। थोड़ी देर बाद मेरा परिचय पूछा। मैंने परिचय देते हुए कहा कि "मैं संत विनोबा का संदेश लेकर आपके गाँव आया हूँ। चाहता हूँ आप सब उसे सुनें।" सभी भाई चकित रह गए। कहने लगे कि—"यह कौनसी बला आ गयी! चुनाव वालों से तो फुरसत मिलती नहीं, ऊपर से आप भी आ धमके।"

पहलवान ने पूछा—"आपका भोजन कहाँ होगा?"

"बच्चों से एक-एक रोटी मँगायी है।"

पहलवान मुस्कराये और कहा कि भोजन हमारे घर होगा।

वहाँ पर फिर भूदान की चर्चा होने लगी। सवालों की झड़ी लग गयी। उत्तर देने लगा। अन्त में पहलवान ने कहा कि "भाई, मैं कुछ जमीन जरूर दान दे दूँगा और सबको संत के इस पवित्र काम में हिस्सा लेना चाहिए।" यह सुन कर कुछ लोग तिरछी आँखों से कनखियाँ घुमाघुमा कर एक दूसरे को देखने लगे। एक बूढ़े ने कहा—"हम तो कहते हैं कि जो सुख अंग्रेजों के राज में भोग लिया—वह अब कोई राज नहीं दे सकता!"

वृद्ध की इस बात से कौड़े वाले सहमत नहीं थे। बातचीत चलती रही। मैंने कई पावन प्रसंग सुनाये। ग्रामदान का जिकर आया। वह बहुत अच्छा लगा। तब मैंने कहा कि पहले थोड़ी-थोड़ी जमीन का त्याग करें। फिर ग्रामदान की तैयारी। एकदम सन्नाटा। मैंने पहलवान से पूछा—"आप क्यों चुप हैं? आपको तो कुछ दान देना ही चाहिए।" वह सिर हिलाने लगे। फिर मुस्कराये और पन्द्रह बीघे का दान दिया। मैंने कहा—"बोलो, दानवीरों की जय।"

इसके बाद भोजन की बारी आयी। मैंने खाना खाया और कौड़ा पर हाथ सेंकने लगा। दस बज चुके थे। इतने में नौ-दस साल की उम्र के दो बच्चे आ गये और कहने लगे—"भाईजी! हम लोगों ने तो रोटियाँ इकट्ठा कर ली हैं। आपको भूख लगी होगी, जल्दी चालिये। खाकर हमें धरती-माता के गीत गवाइए।" बैठे हुए सभी बुजुर्ग और नौजवान भौंचक्के से हो गए। मैंने दोनों नन्हें-मुन्नों को छाती से लगा लिया और कौड़ा पर बैठे हुए भाइयों से कहा—"देखिए, बच्चों के रूप में भगवान् दर्शन दे रहा है!"

फिर उन सबको शाम की कहानी सुनाई और बताया कि जिन बच्चों ने घर से रोटी लाने के लिए हाथ उठाये थे, उन्हींमें से ये दो बच्चे हैं। पल भर रुकने के बाद मैंने उन सयानों से पूछा—"भाइयो! बताइए—अब संत विनोबा की क्रान्ति में क्या कसर है?"

इसके बाद फकीरे के घर लौट आया। ग्यारह बज रहे थे। चारपाई पर लेट गया। पूर्णिमा की रात थी। चाँद की चाँदनी में आकाश मस्त था। उधर चाँद जैसे मुखड़े वाले नन्हे-मुन्नों की याद से मैं मस्त झूम रहा था—जिन्होंने भूक्रान्ति का स्पष्ट दर्शन आज कराया।

इन नन्हें-मुन्नों को प्रणाम!

www.vinoba.in

बिहार की संस्थाओं द्वारा भूक्रांति में आहुति

(रामवृक्ष शास्त्री)

भूक्रांति की तीव्रता देख कर बिहार की रचनात्मक संस्थाएँ भी तदनुकूल परिवर्तन कर भूक्रांति में अपनी श्रद्धापूरित आहुति देने की तैयारी कर रही हैं। निम्न कई संस्थाओं ने अपना हविर्भाग भी दिया है। आशा है, दूसरी संस्थाएँ अपना हिस्सा देकर १८ अप्रैल के कार्यक्रम को सफल बनाने में मदद करेंगी।

(१) श्रमभारती, खादीग्राम—यह सर्व-सेवा-संघ का मुख्य केन्द्र है। इसने अपना शिक्षण का पूरा कार्य बंद कर दिया। शिक्षक, विद्यार्थी, स्त्री-पुरुष, कार्यकर्ता, सभी अपने दुधमुँह तथा नन्हें बच्चों को लेकर भूक्रांति को सफल बनाने के लिए साल भर के लिए तंत्र और निधि-मुक्त होकर निकल पड़े हैं। यह पहला अवसर है, जब भूक्रांति के लिए परिवार के परिवार गोद के बच्चे ले-लेकर नवयुवक लड़कों-लड़कियों के साथ निकल पड़े हैं। शिक्षक-विद्यार्थी इसे शिक्षण का विषय कैसे बना सकते हैं, यह इससे स्पष्ट हो जाता है।

(२) बिहार खादी-ग्रामोद्योग-संघ—(क) इसने तय किया है कि उसके कार्यकर्ता ५००० गाँवों के वितरण की जिम्मेदारी लेंगे। (ख) हर केन्द्र ने एक-दो कार्यकर्ताओं के निर्वाह का व्यय जुटाने का संकल्प किया है। (ग) प्रचार-साहित्य पर जितना कमीशन संघ को मिलेगा, सब भूदान-कार्यकर्ता को देंगे, अन्य खर्च संघ बरदाश्त करेगा। (घ) ग्रामदानी ग्रामों के निर्माण में मदद का भी संघ का निश्चय है।

(३) रानीपतरा—यह बिहार के अनन्य सेवक श्री वैद्यनाथ चौधरी का आश्रम पूर्णियाँ जिले में है। आश्रम के कुल १०० कार्यकर्ताओं ने तय किया है कि (क) मास में दो समय उपवास करके २०० समय का भोजन अतिथियों के लिए रखेंगे। (ख) प्रत्येक आश्रमवासी मास में २ लटी,—कुल २०० लटियाँ—सूत सूत्रदान में देगा। (ग) सहायता-प्राप्त कार्यकर्ता संपत्तिदान द्वारा करीब ५०) मासिक देंगे। (घ) खादी-भंडार के कार्यकर्ताओं ने संघन क्षेत्र के चार कार्यकर्ताओं के खर्च की जिम्मेदारी ली है। (ङ) अंबर-परिश्रमालय के विद्यार्थियों ने तय किया है कि वे प्रत्येक मास की परीक्षा का सूत सूत्रदान में देंगे ४० विद्यार्थी हैं। वर्ग-समाप्ति के दिन का पूरा सूत्र दान में देंगे। (च) आश्रमवासी सप्ताह में एक दिन पास के गाँवों में श्रमदान करेंगे।

(४) लक्खीसराय-अंबर विद्यालय—यहाँ के आचार्य श्री निर्मल कुमारजी 'श्रमभारती' के ही स्नातक हैं। यहाँ महीने में दो दिन शिक्षक-विद्यार्थी उपवास रख कर भूदान के अतिथियों के लिए खर्च जुटायेंगे। (२) सभी विद्यार्थियों को ४०) छात्रवृत्ति मिलती है। उसमें से १) संपत्तिदान में देंगे। इसी हिसाब से शिक्षक भी देंगे। (३) रविवार को शिक्षक-विद्यार्थी भूदान-श्रमदान के लिए निकलते हैं।

(५) महिला-संस्थाओं का योगदान—कस्तूरबा ट्रस्ट की संचालिका सुश्री सुशीला बहन निधि-मुक्ति और तंत्र-मुक्ति के बाद कुछ बहनों के साथ इसी काम में लग गयी हैं। अपनी सेविकाओं को भी बारी-बारी से भूदान-कार्य में भेजने का कार्यक्रम चला रही हैं। महिला-चर्खा-समिति, पटना की बहनें भी कई बार भूदान-पदयात्राओं में घूम आयी हैं। उन्हें साहित्य-प्रचार और भूदान प्राप्त करने में काफी सफलता भी मिली है।

(६) सोखोदेवरा—यह श्री जयप्रकाश बाबू का आश्रम है। क्रांति के गर्भ से उत्पन्न यह संस्था सतत क्रांति को सिद्ध करने में लगी है। यहाँ जनआधारित वितरण तथा ग्रामराज्य की स्थापना का विशेष प्रयोग चल रहा है।

(७) गांधी स्मारक निधि, बिहार—सब ग्रामसेवक भूक्रांति-मास में वितरण करेंगे।

धुन व जयघोष

ता० १८ के लिए

मन से अपना काम करें हम, थक कर ही आराम करें हम। टेक।
कल करना वह आज करें हम, ना पल भर बर्बाद करें हम।
साँस-साँस में जीवन गुजरे, पाँव बढ़ायें मंजिल।
प्रभु के हाथ बड़ी बलशाली कट जाती हर मुश्किल रे। टेक।
मेहनत कर इन्सान बनें हम, नवयुग का आह्वान सुनें हम। मन से।
सत्-जीवन में भूमिहीन, कोई न रहेगा, कोई न रहेगा।
राम-रहीम कृष्ण-करीम, धरती पर अब गूँज उठेगा।
बदल गयी है युग की रीति, श्रम-जीवन-आधार रहेगा।
मालिक मैं, मजदूर दूसरा, जग से ऐसा भाव मिटेगा।
सत्य-अहिंसा का यह देश, खून नहीं रे प्रेम बहेगा।
कोई धनी हो, कोई गरीब, अब न जमाना जुल्म सहेगा।

इलाहाबाद जिले में भूदान की प्रगति

निधि-मुक्ति और तंत्र-मुक्ति के ऐतिहासिक निर्णय के बाद भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसात्मक क्रान्ति का काम इलाहाबाद जिले में गत २२ जनवरी '५७ से करछना तहसील में शुरू हुआ। क्षेत्रफल के विचार से तहसील को तीन हिस्सों में बाँटा गया और उनमें पदयात्रा की टोलियाँ निकाली गयीं। पूरा समय देने वाले सात लोग रहे। सहयोग देने वालों में करीब आठ-नौ भाई-बहन थे।

तहसील में तीन स्थानों पर कार्यकर्ताओं के शिविर हुए—चौकठा, लोहगरा और छरबना; इन शिविरों की विशेषता यह है कि कार्यकर्ताओं के भोजन का प्रबन्ध गाँववासियों ने अपने-अपने घरों में किया। व्यवस्थादि पर भी जिला सर्वोदय-कार्यालय का एक पैसा तक खर्च नहीं हुआ। पदयात्रा में घूमने वाली टोलियों ने जो नोटिस या परिपत्र जगह-जगह चिपकाये, उन सबकी छपाई भी मुफ्त हो गयी। छपाने के लिए कागज भी मुफ्त मिल गया। इस तरह जनता के सहज सहयोग से काम चल रहा है। कोई कार्यकर्ता संपत्ति-दान-यज्ञ से सहायता नहीं लेता। अपने तेल, साबुन आदि का फुटकर खर्च साहित्य-बिक्री के कमीशन से निकाल लेते हैं।

चौकठा इलाहाबाद जिले का पहला गाँव है, जहाँ के सभी भूमिदारों ने कुछ-न-कुछ भूमिदान देकर बाबा राघवदासजी की प्रेरणा से अपने गाँव में से भूमिहीनता मिटा दी। इसका एक अनोखा परिणाम यह हुआ कि गाँववालों ने बीड़ी-सुर्ती पीना भी छोड़ दिया है। बीस चरखे भी चल रहे हैं। श्री लल्लूसिंह लगभग डेढ़ साल से यहाँ बैठे हैं। शिविर में ३० जनवरी को श्री कनूभाई गांधी और वयोवृद्ध हिन्दी लेखक श्री भगवानदास केला पधारे। श्री कनू गांधी के हाथों गाँववालों ने एक 'बाल्टी-पाखाने' का उद्घाटन भी कराया, जो इस इलाके के लिए नयी बात है। लोहगरा के शिविर में श्री विमला बहन का मार्गदर्शन कार्यकर्ताओं को मिला। वहाँ श्री जंगीराम दुबे ने १५ अप्रैल से ३१ दिसम्बर तक का पूरा समय 'भूक्रान्ति' में लगाने का संकल्प भूमि-दान के साथ किया।

तीनों शिविरों से निकली टोलियों के अंतिम समारोह तीन स्थानों में हुए। चौकठा क्षेत्र का शंकरगढ़ में विमला बहन की अध्यक्षता में, लोहगरा का बाँदा वाले श्री ब्रह्मदत्त वाजपेयी की अध्यक्षता में और छरबना क्षेत्र का तथा तहसील भर का अन्तिम समारोह १७ फरवरी को श्री दादा धर्माधिकारीजी की अध्यक्षता में करछना में हुआ। तीनों क्षेत्रों की पदयात्रा में १२८ दाताओं से १३५ बीघा १० बिस्वा जमीन का भूदान, ७२ दाताओं से ४५४) का संपत्तिदान मिला। 'भूदान-यज्ञ' के २२ ग्राहक बने और ९०) की साहित्य-बिक्री हुई। इसके अतिरिक्त १४ परिवारों में २० बीघा १० बिस्वा जमीन का वितरण भी हुआ।

इस पदयात्रा में एक विशेष दर्शन मिला। स्कूलों और कालेजों के विद्यार्थियों ने भूक्रान्ति में खास दिलचस्पी दिखलायी। जगह-जगह जिनसे संपत्तिदान मिले, उन स्कूलों की सूची नीचे दी जाती है :—

(१) केसरवानी इन्टर कालेज, जसरा; (२) सुभाष इन्टर कालेज, कर्मा; (३) अपर प्राइमरी स्कूल, छरबना; (४) जूनियर हाईस्कूल, पीड़ी; (५) हायर सेकेन्ड्री स्कूल, कालापुर; (६) मदनमोहन मालवीय इन्टर कालेज, करछना; (७) हरीराम जू० हाईस्कूल, चन्द्रा; (८) सरदार पटेल उद्योग-विद्यालय, हरिहरपुर; (९) रणजीत पं० जू० हाईस्कूल, बगवना; (१०) जू० हाईस्कूल, दाँदूपुर; (११) प्राइमरी पाठशाला, मझगवाँ और (१२) कन्या जू० हाईस्कूल, शंकरगढ़। कुल ५२७ छात्र-छात्राओं से करीब ६८) मासिक संपत्तिदान मिले।

करछना-कालेज के २०४ और जसरा-कालेज के ६५ विद्यार्थियों ने छुट्टियों में २ महीना भूदान-यज्ञ-आंदोलन में काम करने के लिए अपना नाम भी लिखाया। पदयात्रा में बच्चों की भी टोलियाँ निकलीं।

—सुरेश राम

संवाद-सूचनायें :

"साम्ययोग" और "ग्रामराज" का प्रकाशन बंद

विनोबाजी की सूचनानुसार नागपुर और बाद में नरसिंहपुर से प्रकाशित साप्ताहिक भूदान-पत्र "साम्ययोग" और जयपुर, राजस्थान से प्रकाशित होने वाला पाक्षिक भूदान-पत्र "ग्रामराज" अब बंद होने जा रहे हैं, ताकि साप्ताहिक "भूदान-यज्ञ" के लिए सबकी शक्तियाँ लगें। अतः सबसे सहयोग की प्रार्थना है। बकाया चंदे के संबंध में इन पत्रों के ग्राहकों को सीधे ही सूचनाएँ दे दी गयी हैं।

—संपादक

www.vinoba.in

'नयी परिधियाँ'

"भूदान की सामर्थ्य के बारे में, संशय करने वाले व्यक्ति चाहे जो भी कहें, विचार स्वयं फैल रहा है। पिछले वर्षों भूदान का विचार बढ़ कर ग्रामदान तक पहुँचा है। अब तक दो हजार गाँव दान में मिल चुके हैं। इनमें कोरापुट के १५७५, मदुरा जिले के १३८ और महाराष्ट्र के एक सौ से अधिक गाँव शामिल हैं। कोल्हापुर और भी आगे जाकर पूरे तालुका के दान का प्रयत्न कर रहा है। आंदोलन का तालुक़ा-दान पर यह ज़ोर ही भविष्य के लिए सबसे ज़्यादा आशा-जनक है। चंद एकड़ ज़मीन का दान, ज्यादा से ज्यादा, गाँव के कुछ लोगों को मदद कर सकता है। वह न तो गाँव के जीवन का अभिप्राय बदल सकता है और न उसमें रहने वालों की परिधि का विस्तार कर सकता है। लेकिन जहाँ गांव की पूरी ज़मीन दान में मिलती है, वहाँ सहकारी जीवन के प्रयोग का नया और प्रोत्साहक अवसर हासिल होगा। जैसा कि विनोबाजी ने खुद कहा है, मौजूदा ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में अलगाव (ISOLATION), मनुष्य की मानवीय भावनाओं का क्षय (CORRODE) और पृथ्वी के कटाव (EROSION) की तरह मनुष्य-जाति के गुणों का भी क्षय हुआ है। ग्रामदानी गाँवों में, जहाँ ज़मीन सबकी है, यह सारे अलगाव खतम हो जाते हैं। अब गाँव के लोग सहज ही एक बड़े परिवार के रूप में रहने और योजना करने लग जायेंगे। वे अब नया जीवन और नये मूल्यों की खोज करेंगे। लेकिन यह कह देना जितना आसान है, करना उतना आसान नहीं है। पुरानी आदतें मुश्किल से जाती हैं। गांव की सारी जमीन का केवल एक सहकारी फ़ार्म ही बन जाने से वह समाजी लगाव पैदा नहीं हो सकता, जो इस प्रयोग को सफल बनायेगा। सहकारी जीवन की ललकार सारी समस्याओं को एक नयी निगाह से देखने की माँग करती है। अगर इस प्रयोग को सफल बनाना है और ग्राम के जीवन को संपन्न बनाना है, तो अनेक समस्याओं को हल करने के लिए कुछ वर्षों तक ग्रामीणों की मदद करनी होगी और उन्हें इस बात की तालीम देनी होगी कि सहयोग और सहकार से किस तरह ज्यादा से ज्यादा लाभ उठाया जा सकता है।

"यह, सबसे पहले, ज़मीन को फिर से बाँटने की समस्या है। इसमें से अभी कई सवाल उठेंगे, जैसे कि सारी जमीनों का एक फ़ार्म बनाना है या छोटे छोटे टुकड़ों में बाँटना है या कुछ ज़मीन सहकारी खेती के लिए अलग रख छोड़ी जायगी और बाक़ी सारे परिवारों में बाँट दी जायेगी? सहकारी खेती हो, तो उस साहसिक कार्य में हर ग्रामीण कितना श्रम देगा? पूरी पैदावार में उसका हिस्सा श्रम करने वाले व्यक्तियों के हिसाब से या परिवार के सदस्यों के हिसाब से रहेगा? जो दूध दुहता है, हल चलाता है, पढ़ाता है, उस प्रत्येक के श्रम को परखने की कसौटी क्या होगी? वस्तुतः आरम्भ के महीने बहुत ही छानबीन करने वाले और नाजुक होंगे, क्योंकि केवल प्राथमिक लाभ ही गाँव वालों का विश्वास, सहकार पर जमा सकते हैं।

"इस प्राथमिक काल में ग्रामीणों को मार्ग दिखलाने की योजना बनाने वालों, केन्द्र, राज्य और भूदान-कार्यकर्ता, सबके लिए समान चुनौती है। योजना-कमीशन हर ज़िले में नमूने के सहकारी फ़ार्म बनाने के वायदा कर चुका है। कोई वजह नहीं कि गाँव वालों को वह सहकारी खेती की ट्रेनिंग देने के अपने प्रोग्राम पूरे करने के लिए इन ग्रामदानी गाँवों का उपयोग न करे। गाँव वालों को व्यापारियों और साहूकारों के शोषण से बचाने के लिए हर ग्रामदानी गाँव में सहकारी दूकानें खोली जानी चाहिए। अक्सर गाँव के लोग दूकान के लिए पूँजी जमा नहीं कर पाते। राज्य-सरकारें इस काम में आसानी से सहायता कर सकती हैं। विनोबाजी बहुत ही उत्साह में हैं। उन्होंने ग्रामदानी गाँवों का आनन्दमय चित्र खींचा है, जिसमें न किसी परिवार पर कर्ज़ होगा, न वहाँ कोई शोषण होगा। उनका कहना है कि यदि हम गाँव के लोगों को समझा दें तो एक के बाद एक, सारे गाँव ग्रामदानी बन जायेंगे। लेकिन यह केवल ग्रामीणों को समझाने का ही सवाल नहीं है। उन्हें इस योजना का फल अपने सामने देखने का अवसर भी मिलना चाहिए। अगर योजना बनाने वालों की तरफ़ से मदद या मार्ग-प्रदर्शन की कमी के कारण यह विचार पूरे तौर से कार्य रूप में न आ सका, तो यह एक शोकजनक बात होगी।"

दिल्ली, ८-३-५७ —'टाईम्स ऑफ़ इंडिया' के अग्रलेख से सादर

उत्तर प्रदेश में प्राप्त सूत्रांजलि

क्रम	स्थान	प्राप्त सूत्रांजली	क्रम	स्थान	प्राप्त सूत्रांजली
१.	फतेहपुर	४१,०००	१०.	मुरादाबाद	१,८५०
२.	अयोध्या	२१,०००	११.	पीलीभीत	१,४४२
३.	सुल्तानपुर	२०,०००	१२.	मैनपुरी	१,०००
४.	मगहर	१५,१२२	१३.	सादात	५,४४८
५.	बनारस	१२,०००	१४.	बहराइच	३५०
६.	इलाहाबाद	१२,०००	१५.	बुलन्दशहर	२८५५
७.	बलिया	१०,०००	१६.	बाराबंकी	१,३२१
८.	इटावा	१०,०००	१७.	बिजनौर	१५,८०६
९.	देवरिया	८,२८१	१८.	बनकटा	१००
			१९.	एटा	४,२००

आगामी सर्वोदय-संमेलन

आगामी सर्वोदय-संमेलन केरल में, 'कालड़ी' में ता० ७ से १० मई, १९५७ के बीच होगा, ऐसा करीब-करीब तय हो चुका है, पर इसकी अधिकृत सूचना अगले अंक में ही दी जा सकेगी।

'कालड़ी' आद्य शंकराचार्य का जन्म-स्थान है और यह त्रिचुर (कोचीन लाइन) के पास है। —संपादक

श्री विनोबाजी का पत्रव्यवहार का पता : C/o 'गांधी-निकेतन', डाकघर--टी० कल्लुपट्टी, P.o. T. Kallupatti (Dist. Madurai) **तार का पता**—C/o खादी वस्त्रालय, तिरुमंगलम्, Tirumangalam (Madurai)

प्रकाशन-समाचार

सम्पत्तिदान (उर्दू) प्रथम संस्करण, श्रीकृष्णदास जाजू पृष्ठ ९२, मूल्य ।।)

यह सम्पत्तिदान के नये संस्करण का उर्दू अनुवाद है जो उर्दू में इस विषय के साहित्य की कमी को बहुत अंशों में पूरा करता है।

Economy of Permanence (Third edition) J.C. Kumarappa Pages 214, Price Rs. 3/

हाथ-कागज पर छपी इस सजिल्द पुस्तक में पूर्व-प्रकाशित दोनों खण्डों को मिला कर एक कर दिया गया है। मूल्य भी ४) के बजाय ३) हो गया है। गांधीजी की भूमिका के साथ इस पुस्तक में कुमारप्पाजी ने यह विवेचन किया है कि ग्रामोद्योगों द्वारा मानव का कल्याण कैसे हो सकता है।

जनक्रान्ति की दिशा में (द्वितीय संस्करण) विनोबा पृष्ठ ८०, मूल्य ।)

इसमें तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति का स्पष्टीकरण तथा इस सम्बन्ध में प्रबन्ध-समिति के निर्णय और जोड़ दिये गये हैं। भूक्रान्ति के हरएक सेवक के लिए यह पुस्तक आवश्यक है।

—अ. भा. सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

विषय-सूची

१.	भारतीय राजचिह्न का संकेतार्थ	विनोबा	१
२.	गाँवों की ताक़त कैसे बनेगी?	,,	१
३.	ग्रामदान की गंगा के पावन तुषार!	,,	२
४.	क्रांति के लिए अलविदा!	धीरेन्द्र मजूमदार	३
५.	भूदान-क्षेत्र में श्रमदान का स्वरूप	उ० केशवराव	३
६.	पोचमपल्ली से पलनी तक भूदान-यज्ञ की प्रगति	विमला बहन	४
७.	भूदान-आंदोलन और बहनें	मोहनलाल सिंह	५
८.	बुनियाद बदलने वाली करुणा चाहिए!	विनोबा	६
९.	सर्वोदय की दृष्टि : स्व० बाळा साहब खेर!	लक्ष्मीनारायण भारतीय	६
१०.	बिहार को सन् '५७ की भूक्रांति का आवाहन	(अपील)	७
११.	सामाजिक सुरक्षा और संपत्ति-दान	मनमोहन चौधुरी	८
१२.	समता और ममता!	नेमिशरण मित्तल	९
१३.	नन्हें-मुन्नों के रोटी के टुकड़े!	देवतादीन मिश्र	९
१४.	बिहार की संस्थाओं द्वारा भूक्रांति में आहुति	रामवृक्ष शास्त्री	११
१५.	इलाहाबाद जिले में भूदान की प्रगति	सुरेशराम	११
१६.	'नयी परिधियाँ'	('टाईम्स' का अग्रलेख)	१२
१७.	प्रकाशन-समाचार, संवाद-सूचनाएँ आदि	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : पोस्ट बॉक्स नं० ४१, राजघाट, काशी

www.vinoba.in